श्री श्वे० स्था० जैन स्वाध्यायी संघ, गुलाबपुरा का ४६वां पुष्प

卐

सोहन काव्य-कथा मंजरी

卐

रचनाकार :
स्वाध्याय-शिरोमणि, आचार्यप्रवर
श्रद्धेय सोहनलालजी म.सा.

प्रकाशक :
श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ
गुलाबपुरा-३११०२१ (राज.)

सोहन काव्य कथा मंजरी

भाग ८

दो चरित्रों का संग्रह

रचनाकार :
आचार्यप्रवर, श्रद्धेय,
गुरुवर्य श्री सोहनलालजी म. सा.

सम्पादिका :
डॉ० साध्वी रत्नत्रयी

प्रथम संस्करण
अगस्त १९९६

मूल्य :
लागत मूल्य १६ रुपये

अर्थ सौजन्य :
श्रीमान् गोपीचन्दजी
हरीशकुमारजी सा. चोरडिया
मसूदा (वर्तमान-बिजयनगर)

मुद्रक :
मंगल मुद्रणालय
महावीर सर्किल, गंज, अजमेर
फोन : २३६२६/३०३२६

प्रकाशक :
श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ
गुलाबपुरा (राज.)

प्रकाशकीय

साहित्य की विधाओं में कथा उतनी ही प्राचीन है जितनी कि स्वयं मानव-सृष्टि। जब दो व्यक्ति मिलते हैं एवं परस्पर कुशल-क्षेम के समाचार पूछते हैं, तब वे अपनी कहानी ही कहते हैं या सुनाते हैं। यही कहानी का उद्गम स्रोत है।

तब से अब तक इस कहानी ने एक लम्बी दूरी की यात्रा तय की है। कथा से कहानी, फिर लघुकथा व बोधकथा के रूप में विकसित होकर अब वह अ-कहानी की सीमा को स्पर्श करने लगी है।

किसी भी आयु के व्यक्ति के लिए कहानी सुनना या पढ़ना आनन्ददायक होता है। अपने देश में ही दादी-नानी के द्वारा कहानी कहने-सुनने की परम्परा चली आ रही है। शिक्षितों और अशिक्षितों में समान रूप से कहानी की विधा लोकप्रिय है। विविध घटनाक्रम के साथ संजोए गए पात्रों के गतिमान जीवन के माध्यम से मानो पाठक अपने ही जीवन की कहानी पढ़ता है। वह घटना भी अपनी बात कहकर पाठक के मन में निराकार रूप से पैठकर उसे आन्दोलित करती रहती है अतः उसकी अनुगूंज तो लम्बे समय तक सुनाई पड़ती रहती है। इस प्रकार कहानी जीवन से जुड़कर जीवन मूल्यों की समृद्धि का माध्यम बनती है।

कथा का मूल आधार घटना का चमत्कार होता है तथा घटना-चमत्कार किसी धार्मिक, नैतिक या साहसिक मूल्य की स्थापना करता है। अति प्राचीनकाल में लिखी गई पंचतंत्र, हितोपदेश, बेताल पच्चीसी, सिंहासन बत्तीसी आदि की कथाएं नीति की शिक्षा प्रदान करने वाली रही हैं जिससे व्यक्ति व समाज के जीवन को एक दिशा मिली है। इनमें वर्णित व्यक्ति एकाकी न होकर सम्पूर्ण समाज के एक प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित होता है इसलिए पाठक उसके जीवन से प्रेरणा प्राप्त कर पाते हैं। यद्यपि कथा का प्रस्थान बिन्दु व्यक्ति है किन्तु गन्तव्य तो समाज ही होता है।

इस कथा-शिल्प के साथ यदि काव्यात्मकता का भी मधुर मेल हो जाय तो सोने में सुगन्ध आ जाती है गेयत्व का मेल होने के कारण, माधुर्य में अभिवृद्धि होने से उसकी प्रभावशीलता द्विगुणित होकर पाठक के मन पर स्थायी असर कर जाती है।

प्रस्तुत काव्यात्मक कथा-संकलन के कथाशिल्पी विद्वद्वरेण्य, परमश्रेष्ठ, मधुरवक्ता आशुकवि आचार्यप्रवर, गुरुवर्य श्री सोहनलालजी म. सा. एक ऐसे ही अमर कथाकार हैं जिन्होंने अपनी कथाओं के माध्यम से तर्कजाल की भांति उलझे हुए मनुष्य के मन की समस्याओं को सुलझाया है, सांसारिक व्यामोह से उसे मुक्तकर मानवीय संवेदनाओं की अनुभूति से उसे सम्पन्न बनाया है और इस प्रकार स्वस्थ, अनासक्त एवं समर्पित व्यक्ति का तथा शुद्ध आचार वाले समाज का निर्माण किया है।

वि. सं. २०४४ का वर्ष श्री स्वाध्यायी संघ के आद्य-संस्थापक, राजस्थान-केसरी, श्रद्धेय गुरुवर्य श्री पन्नालालजी म.सा. का जन्मशती वर्ष था। इसी समय, हमारी आस्था के केन्द्र स्वाध्याय-शिरोमणि श्रद्धेय गुरुवर्य आचार्य श्री सोहनलालजी म. सा. ने अपने जीवन के ७७वें वसन्त में प्रवेश कर अपने महिमा-मंडित जीवन से हमें गौरवान्वित किया है। इसी वर्ष पूज्य गुरुवर्य द्वारा समुपदिष्ट श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ गुलाबपुरा ने भी अपनी स्थापना के ५० वर्ष पूरे किए हैं। इस प्रकार यह त्रिवेणी-संगम हम सभी के लिए परम हर्ष का विषय रहा है।

पूज्य गुरुदेव के अनुयायी भक्तों की यह हार्दिक अभिलाषा थी कि उनके अब तक के प्रकाशित व अप्रकाशित काव्यात्मक कथानकों को—जो लगभग ३०० से भी अधिक हैं—क्रमश: प्रकाशित कराया जाय ताकि पाठक उनसे समुचित लाभ उठा सकें एवं साहित्य के अनुसंधित्सुओं के लिए भी पथचिह्न बन सकें। वर्तमान दूषित वातावरण में युवकों को सत्साहित्य उपलब्ध नहीं होने से वे घटिया एवं चरित्रहन्ता साहित्य पढ़कर अपना समय नष्ट करते हैं। उन्हें भी व्यवहार व धर्मनीतिपरक साहित्य सुलभ कराना भी इसका एक उद्देश्य रहा है।

इसी भावना के अनुसार पूज्य गुरुदेव श्री द्वारा रचित कथानकों को क्रमश: प्रकाशित करने की योजना बनी। इस योजनान्तर्गत सोहन काव्य कथा मंजरी के ७ भाग अब तक प्रकाशित हो चुके हैं, जिन्हें सुधी पाठकों ने एवं सन्त-सतियों व स्वाध्यायी बन्धुओं ने काफ़ी सराहा है। इसका यह आठवां पुष्प पाठकों को समर्पित करते हुए परम हर्ष है।

इस संकलन को संपादित कर तैयार करने में हमें साध्वी रत्नत्रयी डॉ. श्री ज्ञानलता जी म. सा., डॉ. श्री दर्शनलताजी म. सा. एवं डॉ. श्री चरित्रलताजी म. सा. का पूरा-पूरा सहयोग मिला है; इसके लिए उनके प्रति हम हृदय की असीम आस्था के साथ अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं। साध्वी रत्नत्रयी स्वयं कवि गायक एवं लोक-तर्जों की ज्ञाता हैं अतः प्रस्तुत संकलन को उन्होंने मनोयोगपूर्वक तैयार कर जो प्रशंसनीय प्रयास किया है उसके प्रति नतमस्तक होते हुए हार्दिक आभार।

आशा है पाठकगण इस काव्य कथामाला से लाभ प्राप्तकर जीवन में नैतिकता विकसित कर सकेंगे, इसी विश्वास से—

नेमीचन्द खाबिया
मंत्री
श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ
गुलाबपुरा

गुलाबपुरा
दि. १ अगस्त १९९६
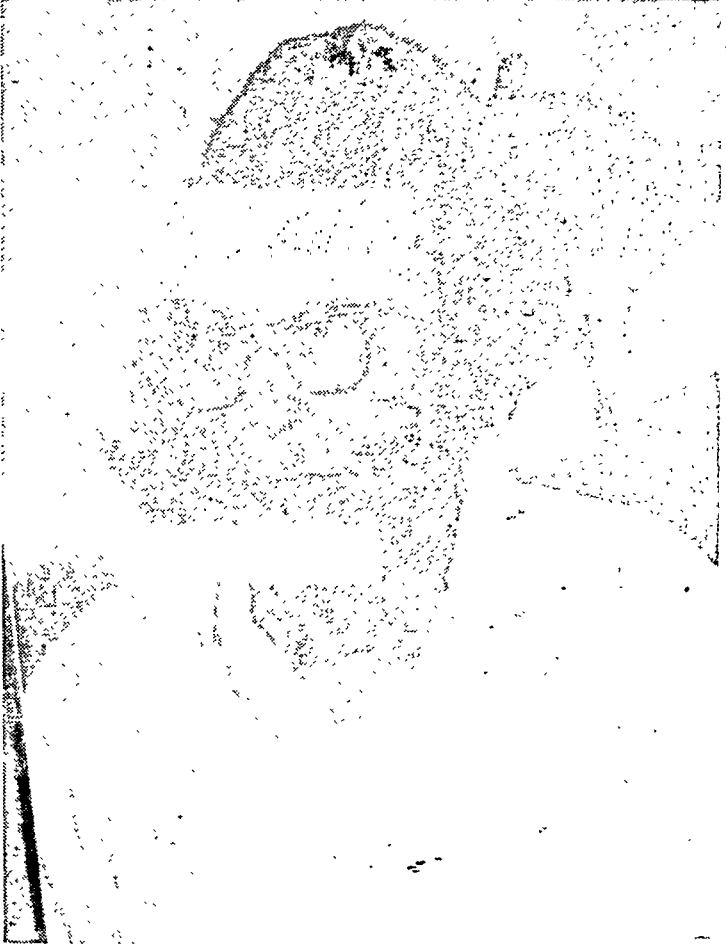
श्रीमान सेठ मदनलालजी चौरड़िया, मसूदा
स्वर्गवास : 20-2-1994

श्रीमती वृजकंवर चौरड़िया
धर्मपत्नी : श्रीमान् सेठ मदनलालजी चौरड़िया, मनूदा
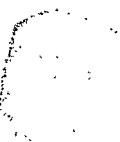
श्रीमान् मदनलालजी सा. चोरड़िया

—एक परिचय—

"उस व्यक्ति का जीवन पूर्ण सार्थक है, जिसके जीवन में स्नेह, सद्भावना, सहयोग, उदारता, तप व त्याग की निर्मल भावनाएं अठखेलियां कर रही हों जो अपने लिए न जीकर परमार्थ के लिए समर्पित होने की भावना दिल में संजोए हुए हो।" प्रस्तुत कसौटी पर जब हम धर्मप्रेमी, परम गुरुभक्त श्रीमान् मदनलालजी सा. चोरड़िया का जीवन कसते हैं तो उनका जीवन परम तेजस्वी एवं यशस्वी प्रतीत होता है।

आपका जन्म १० फरवरी १९१४ को मसूदा (जिला अजमेर) में हुआ। आप श्रीमान् राजमलजी सा. चोरड़िया के ज्येष्ठ पुत्र थे। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती व्रजकुंवर बाईजी एक आदर्श धर्म परायणा सुश्राविका हैं।

आपका परिवार मसूदा में ही नहीं, अपितु आसपास के सम्पूर्ण क्षेत्र में प्रतिष्ठित उदार एवं प्रामाणिक माना जाता रहा है। मसूदा के राव साहब श्रीमान् नारायणसिंह जी सा. (पूर्व मंत्री, राजस्थान) आपको भ्राता के समान मानते हुए अपूर्व स्नेह रखते थे। आप सरल प्रकृति वाले शांत स्वभावी थे। परोपकार की भावना आप में कूट-कूट कर भरी थी। व्यवहार से विनम्र, नियमित एवं सदाचारी थे। कभी भी कोई भी दीन-दुःखी आपके द्वार पर आया, कभी खाली हाथ नहीं गया। सजग और स्पष्टवादी इतने थे कि अनेक अवसरों पर सन्तों को भी उनकी क्रियाओं के प्रति सजग करते रहते थे। श्रद्धेय बालचन्दजी म. सा. एवं प्रवचन प्रभाकर श्रद्धेय वल्लभमुनिजी म. सा. की दीक्षा के अवसर पर आपने धर्मभ्राता बनकर अपने धर्मानुराग का व जिन शासन-भक्ति का अपूर्व परिचय दिया।

एक बार श्रद्धेय गजमलजी म. सा. ने अभिग्रह धारण किया कि श्री राजमलजी सा. चोरड़िया के परिवार वाले मिलकर मुझे हल्दी, फिटकरी और खल तीनों पदार्थ गोचरी में वहरावें तो आहार लेना अन्यथा जब तक अभिग्रह न फले तब तक तपस्या करना। यह अभिग्रह भी तीसरे ही दिन आपके हाथों फल गया।

आपके दो पुत्र हैं। प्रथम, श्रीमान् गोपीचन्दजी सा. चोरड़िया, सीनियर कॉटन परचेज ऑफिसर के पद पर विजयनगर में सेवारत हैं एवं द्वितीय श्री हरीशकुमारजी चोरड़िया भी कॉटन परचेज ऑफिसर के पद पर सुमेरपुर हैं। तीन पौत्र श्री विकास, कल्पेश एवं मयंक व दो पौत्रियां सुश्री विनीता व मनीषा भी धर्मानुराग से अनुरक्त हैं। परमश्रद्धेय, आचार्यप्रवर गुरुवर्य श्री सोहनलालजी म. सा. के प्रति आपका पूरा परिवार सुदृढ़ श्रद्धा वाला रहा है। □□

भूमिका

काव्य ने प्राचीनकाल से ही जन मानस को प्रभावित किया है। गद्य में कही जाने वाली बात से भी अधिक असर होता है पद्य का। तभी तो कबीर, तुलसी, सूर, घनानंद आदि कवियों ने अपने अनुभव को पद्य की प्रणालिका से प्रवाहित किया और वह उपदेश जनता में समादृत हुआ। पद्य के माध्यम से सागर को गागर में भर कर जनता जनार्दन तक पहुँचाया जा सकता है। वर्षों तक अपने आप को संयम साधना में लगाकर यदि कोई अनुभूत सत्य तथ्य का उद्घाटन करे तो उसका प्रभाव तो अनूठा ही होता हैं।

सोहन काव्य कथा मंजरी के आठवें भाग में 'नारी कभी न हारी' एवम् 'अंधकार से प्रकाश की ओर' इन दो चरित्रों में मानवती और मंजुला का महिमा मंडित जीवन अंकित किया गया है। नारी के अनेक रूप हैं। वह दादी, नानी, माता, पत्नी, भगिनी, पुत्री, भुआ, मौसी, भाभी, सास आदि न जाने कितने रिश्तों के रेशमी धागों से बंधी हुई है। नारी के साथ परिवार की कल्पना संतरंगी हो उठती है। नारी है तो घर सब कुछ है अन्यथा घर की जो स्थिति होती है वह किसी पुरुष से छिपी नहीं है। शंकर ने यह भी गर्ग से कहा है कि जिस घर में सर्वसद्गुण सम्पन्न नारी निवास करती है उस घर में लक्ष्मी का वास रहता है। हे वत्स! कोटि देवता भी उस घर को नहीं छोड़ते।

गृहस्थ धर्म की जिम्मेदारी का वहन करते हुए नारी ऐसी कठोर साधना कर सकती है कि कई साधुओं की साधना उसके सामने फीकी पड़ जाती है। एक पतिव्रत धर्म ही उनके पास ऐसा शस्त्र है जिसके सम्मुख बड़े-बड़े वीरों के अस्त्र शस्त्र भी कुंठित हो जाते हैं। पतिव्रता नारियाँ अनायास ही सिद्ध योगियों जैसी सिद्धि पा लेती हैं इसमें संदेह का कोई स्थान नहीं है। भारत भूमि की उज्जवल तारिका नारियों के लिए कितना सुन्दर कहा है—

> याद रखो हिन्द नारी धर्म दे सकती नहीं,
> प्राण दे सकती मगर शर्म दे सकती नहीं।
> क्या नहीं तुमने सुना सीता कहानी बन गई,
> शील की ताकत के आगे आग पानी बन गई॥

चरित्रशीला नारियों का स्वर्णिम इतिहास नारी जाति के लिए आदर्श है। महासती सीता के शील धर्म के प्रभाव से धधकती हुई अग्नि-ज्वालायें शीतल जल में

बदल गई। महासती द्रोपदी के धर्म ने चीर को बढ़ा दिया तो महासती सुभद्रा ने कच्चे धागों से छलनी बांधकर कुए से जल निकाला। क्या ये घटनायें चमत्कारपूर्ण नहीं थीं! अनुसूया के पतिव्रत धर्म ने ब्रह्मा, विष्णु, महेश को छः छः महीने के दूध पीते बच्चे बना दिया था, शांडिल्य ने निरन्तर चलते रहने वाले सूर्य की गति को रोक दिया था। सावित्री ने अपने पति के प्राणों को यमराज से पुनः पा लिया। अनेकों ऐसे उदाहरण इसके पुष्ट प्रमाण हैं कि पतिव्रता नारियाँ इस पृथ्वी को पवित्र करती हैं और जीवन संग्राम में कदम-कदम पर विजय उनके चरण चूमती है तभी तो कहा है—

लज्जा वासो भूषणं शुद्धशीलम्,
पादक्षेपो धर्म मार्गे च यस्याः।
नित्यं पत्युः सेवनं मिष्टवाणी,
धन्या सा स्त्री पूवयत्येव पृथ्वीम् ॥

जिस स्त्री का लज्जा ही वस्त्र हो, विशुद्ध शील ही भूषण हो, जिसका धर्म-मार्ग में प्रवेश हो, पतिसेवा परायण हो, मधुर वाणी बोलने का जिसमें गुण हो, ऐसी श्रेष्ठ नारी इस पृथ्वी को पवित्र करती है।

प्रस्तुत चरित्र द्वय की नायिकाओं मानवती एवम् मंजुला ने नारी जाति के उज्जवल इतिहास को दोहराया है। मानवती ने धर्म एवम् बुद्धि के बल से असम्भव को सम्भव कर दिया है तभी तो नारी को बेचारी मानने वाले राजा मानतुंग उसे ससम्मान पटरानी पद पर आसीन करते हैं। दूसरी तरफ मंजुला सती ने अनगिनत कष्टों को झेला किन्तु अपने शील पर आंच न आने दी। कष्टों की कठिन अग्नि परीक्षा में मंजुला का जीवन कुन्दन सम चमक उठता है ये दोनों चरित्र धर्म श्रद्धालुओं के लिए आका[श] दीप के तुल्य हैं जो पथ विमुख आत्माओं को सही मार्गदर्शन करेंगे।

इन चरित्रों के रचनाकार, जग की कांटों भरी राहों में शांति सुमन विखेरने व[...] जन कल्याण का पथ प्रशस्त करने वाले हमारे संयमी जीवन के हितैषी आचार्य प्र[...] पूज्य गुरुदेव श्री १००८ श्री सोहनलालजी म. सा. संतकवियों की माला के एक अनु[...] मोती हैं जिनकी लेखनी से अनेकों काव्य कृतियों का जन्म हुआ है। आपकी अप्रमत्त[...] का वर्षों से हम अनुभव कर रहे हैं अस्वस्थता के क्षणों में जब चिकित्सकों ने पूर्ण विश्राम की सलाह दी थी तब भी आपकी लेखनी ने विराम नहीं लिया।

सोहन काव्य कथा मंजरी के आठवें भाग को देखने का सौभाग्य हमें मिला आपश्री द्वारा रचित अनेकों चरित्रों को आपके ही मुखारविन्द से सुना है, स्वयं ने पढ़ा है गाया है, सुनाया है। इन चरित्रों ने श्रोताओं को अभिभूत किया है। सरल भाषा में सटीक बात कहना आपके काव्य की विशेषता है, छोटे-बड़े सभी चरित्र शिक्षा प्रदान

हैं। कथानक के अंत में जीवनदायी प्रेरणा पाकर पाठक या श्रोता विवश हो जाता है, अपने विषय में सोचने के लिए और सुज्ञ श्रोता प्रेरणा पाकर अपने व्यवहार में परिवर्तन भी कर लेते हैं।

श्रद्धेय गुरुदेव के असीम परिश्रम को ससीम शब्दों के दायरे में बांधने में हम असमर्थ हैं। आपके सत्पुरुषार्थ की मुक्त हृदय से विनम्र सराहना अनुमोदना करते हुए यही शुभ कामना करते हैं कि आपकी जन मन मोहक लेखनी निरन्तर चलती रहे जिससे साहित्य का सागर समृद्ध बनता रहे तथा मुमुक्षु जन उन चुनी हुई राहों पर चलकर मंजिल प्राप्त कर सकें।

डॉ. साध्वी रत्नत्रयी

मेड़ता सिटी
१ अगस्त १९९६
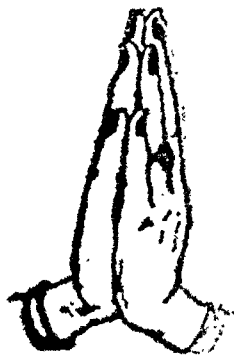
१ | नारी कभी न हारी
मानतुंग-मानवती चरित्र

[तर्ज : खेल]

दोहा : सकल सौख्य दायक सदा, वर्धमान भगवान ।
शुद्ध मन से ध्याये सदा, पावे पद निर्वाण ।।१।।
वन्दन कर गुरु चरण में कथा कहूं सुखकार ।
विघ्न सहू दूरा टले, सानंद पहुंचे पार ।।२।।

सती मानवती का चरित्र अनुपम, सुनलो ध्यान से ।।टेर।।

मालव देश उज्जैनी नगरी, सुखी बसे नर नार ।
प्रजा हितैषी मानतुंग नृप शूरवीर सरदार जी ।।१।।
सब गुण लायक दीन सहायक, गुण ग्राहक भूपाल ।
चोर जार अन्यायी मानों, चले गये तत्काल जी ।।२।।
दाता, शूर, सुभाषी, मौनी, धर्म परायण पूर ।
विनयवान विद्वान भूप नित, रहता अघ से दूर जी ।।३।।
अन्तःपुर भी जिनका नामी, रूप कला विख्यात ।
मिष्ट भाषिणी आज्ञा पालक, मन हरणी मन भात जी ।।४।।
प्रधानमंत्री सुज्ञचन्द था, राज काज आधार ।
सदा ध्यान रखता जनता का, होवे नहीं बिगार जी ।।५।।
एक दिन सिंहासन पर बैठे, मानतुंग महाराज ।
सभासदों में चली वारता, कैसा है यह राज जी ।।६।।
कहे एक नृपराज आपका, एक छत्र है राज ।
दिग् दिगन्त में नाथ आपकी, कीर्ति पसरी आज जी ।।७।।
कहे दूसरा न्याय नीति की, हुई प्रशंसा भारी ।
ऐसे नरपति की छाया में, प्रजा सुखी है सारी जी ।।८।।
अपने-अपने भाव प्रकट कर नृप के सब गुण गावे ।
किन्तु भूप के मन में ऐसा, गहरा चिन्तन आवे जी ।।९।।
ये जो बोल रहे हैं बातें, सच या चाटुकार ।
मीठी बातें सुना भूप को, देते भ्रम में डार जी ।।१०।।

झूंठी वातों को सुन केई, दे कर्त्तव्य विसार ।
पिला देय विष मिश्रित अमृत, जग में चाटुकार जी ॥११॥

स्वयं करूं निर्णय मैं इसका, कितना इसमें सत्य ।
वेश वदलकर पता लगाऊं, साथ न रखूं अमात्य जी ॥१२॥

इससे मालूम होगी मुझको, जनता की सव वात ।
कौन कहां पर कैसी वातें, करे सुनूं साक्षात जी ॥१३॥

संध्या में नृप वेश वदलकर, चला मध्य वाजार ।
सभी प्रजा जन करें प्रशंसा, नृप की जय जयकार जी ॥१४॥

दयावान नृप की छाया में, दुःख का क्या है काम ?
रमा रमण कर रही मोद से, सुखिया लोग तमाम जी ॥१५॥

नरपति अपनी सुनी प्रशंसा, फूला नहीं समावे ।
मेरे राज्य में सुखी प्रजा गण, मंगल मोद मनावे जी ॥१६॥

यों विचारते आगे वढ़ते दृष्टि रुकी वहां जाय ।
जहां पांच वालायें खेलें, सुर वाला सम आय जी ॥१७॥

एक एक का रूप अनूपम, देख भूप विस्माया ।
स्वर्गवासी इन चन्द्रमुखी को, पृथ्वी तल क्यों भाया जी ॥१८॥
भूपति सोचे कहां जा रही, इस वेला के माय ।
गुप्त रीति से पीछे-पीछे नृपति साथ हो जाय जी ॥१९॥
नगर वाहर उपवन में पांचों, अपना मन वहलाय ।
क्रीड़ा मांही इतनी मस्त हुई, पता न कुछ भी पाय जी ॥२०॥
झूले मांही झूला खाकर, कर रही गीत उच्चार ।
मधुर कंठ अमृत वर्षा से, नृप मन हर्ष अपार जी ॥२१॥
उन सखियों की सव क्रीड़ाएं देखे ध्यान लगाय ।
आज अचानक मिला योग नृप रहा भाग्य सराय जी ॥२२॥
इतने में एक सखी थकित हो, आ बैठी वहीं पास ।
श्रम से स्वेद टपक रहा तन से, ले रही गहरे स्वांस जी ॥२३॥
उनके पीछे सभी आ गई, बोली कर उपहास ।
वाह रंग में भंग कर रही, खेल चल रहा खास जी ॥२४॥
वह बोली अब समय हो गया, पहर रात रही जाय ।
चारों बोली क्या भय है यहां, मानतुंग महाराज जी ॥२५॥
ठीक कह रही हो सखियों तुम, भय का नहीं है काम ।
फिर भी रात का ध्यान लगाकर, छोड़ो बात तमाम जी ॥२६॥
एक कहे अब मिल बैठ [illegible], [illegible] संसार ।
मानवती ! अब क्या है तुमको बोलो और [illegible] जी ॥२७॥

श्राज रात भर खेलेंगी यहां, चांद दे रहा साथ।
धवल चांदनी छिटकी रही है मानो सुखद प्रभात जी ॥२८॥
मानवती कहे श्राज नहीं हम कल, खेलेंगे खेल।
कल तो हमारा विवाह होयेगा, फिर कब होगा मेल जी ॥२९॥
विवाह संबंधी बातें छिड़ गई, चारों कहें तत्काल।
सास, ससुर, पति कैसे होंगे, कैसा मिले ससुराल जी ॥३०॥
ना जाने कैसे होंगे वे, ऋजु वा होय कठोर।
परतन्त्रता में बंध जावेगी, स्वतन्त्रता की छोर जी ॥३१॥
सास ससुर श्ररु पति श्राज्ञा में रहना है दिन रैन।
मानवती सुन सब की बातें बोली नहीं एक बैन जी ॥३२॥
मौन देखकर चारों बोलीं, श्रपनी नहीं सुनाय।
किन्तु यह बंधन तो सुनले, एक दिन तुझ पर श्रायजी ॥३३॥
मानवती कहे बंधन नहीं यह, कर्त्तव्य श्रपना मान।
मर्यादा में सदा रहें हम इसमें श्रपनी शान जी ॥३४॥
वे बोली वहां मर्यादा क्या, श्राज्ञा होय प्रमाण।
नार पुरुष की दासी होती, चले न कुछ लो जान जी ॥३५॥
जीवन संगिनी, सह धर्मिणी, सहचारिणी नार।
दासी नहीं कहलाती नारी, मानवती श्रनुसार जी ॥३६॥
एक सखी कहे सुनलो मेरी, है जग का व्यवहार।
दासी रूप में सदा रहे वह, चले श्राज्ञा श्रनुसार जी ॥३७॥
कैसा भी हो पागल कपटी, दुराचारी भरतार।
श्रवगुण कितने भी हो माने, पूज्य रूप में नार जी ॥३८॥
मानवती कहे नहीं मानू, वे कहती लोगी मान।
विवाह बाद पति बंधन में यह श्रकड़ सभी निकलेगी ले जान जी ॥३९॥
श्रकड़ू पति यदि मिला मुझे तो दूंगी श्रकड़ निकाल।
सुनकर सखियां हंस गई सारी बोली एक तत्काल जी ॥४०॥
श्ररि! बनाकर श्रश्व पति के देगी लगाम लगाय।
गाली देकर पांव पूजाये चरणामृत पिलाय जी ॥४१॥
मानवती कहे सखियां सुनलो जो जो बात सुनाई।
विश्वास दिलाती हूं मैं तुमको दूंगी कर दिखलाई जी ॥४२॥
सखियां बोली तू तो तन या धनपति की कहलाय।
गरीब से कर विवाह उसे तू श्राज्ञा मांहि चलाय जी ॥४३॥
गरीब ही क्यों लक्ष्मीपति भी पति मुझे मिल जाय।
शक्ति से नहीं बुद्धि बल से लूंगी काम बनाय जी ॥४४॥

हंसकर बोली सखियें सारी ठीक कह रही बाई ।
धनी पति यदि वृद्ध हो तो परण करे मन चाई जी ।।४५।।
सखियें बोली बुद्धिबल पर इतना है अभिमान ।
तब चाहो हर किसी की ले सकती हो शान जी ।।४६।।
अभी हमें तो यहीं दीख रहे मानतुंग महाराज ।
बुद्धिमान अरु कला कुशल है जाने सकल समाज जी ।।४७।।
उनसे पूरी करो प्रतिज्ञा तब समझे सही बात ।
मानवती कहे वे भी हों तो क्या है मोटी बात जी ।।४८।।
शब्द श्रवण कर मान भूप के लगा कलेजे तीर ।
मजा चखा दूं अभी इसे मैं है कर में समसीर जी ।।४९।।
किंतु ऐसा नहीं करना यह नीति शास्त्र बतलाय ।
ऐसा कर दिखलाऊं इसको सदा याद ही आय जी ।।५०।।
ऐसा चिंतन कर यों कोप सहित नृप आये महल के मांय ।
नींद न आई उधेड़ बुन में, सारी रात बिताय जी ।।५१।।
प्रातःकाल ही महाराजा जब सभा भवन में आये ।
सभी सभासद नमन करी अरु जय जय शब्द सुनाये जी ।।५२।।
किंतु आज लेख नरपति चेहरा सब जन विस्मय पाये ।
चढी भृकुटी नयन लाल अरु तन में रोष भराये जी ।।५३।।
शांत चित्त से सभी सोच रहे क्या कारण है आज ।
इस तरह तो कभी न देखे क्रोधित हुए नरराज जी ।।५४।।
सिंहासन पर बैठ भूपति सबकी ओर निहारे ।
प्रधान को लख बिठा पास में ऐसे शब्द उच्चारे जी ।।५५।।
नगरी में धन मित्र नाम का कौन सेठ कहलाय ।
यहीं रहे धनपति सेठ यों प्रधान जी दरसाय जी ।।५६।।
उसका मुझको परिचय चाहे कैसा है परिवार ।
सुनकर विस्मय ला प्रधान यों कीना हृदय विचार जी ।।५७।।
किस कारण से पूछ रहे हैं क्या कसूर उण मांय ।
एकान्त में कर बात भूप से समझूं सारी वाय जी ।।५८।।
ले जाकर के अन्दर नृप को पूछा सकल वृतान्त ।
प्रधान सन्मुख सारी घटना कही आदि से अन्त जी ।।५९।।
विवाह करके बुद्धि बल की लेऊं परीक्षा भारी ।
वृद्ध सेठ से निर्णय करलो यह इच्छा है म्हारी जी ।।६०।।
प्रधान करके नमन चला है सेठ धाम में आय ।
प्रधान को लख सेठ हृदय में चिंतातुर हो जाय जी ।।६१।।

क्या कारण है आज यहां पर दीवान चल घर आय ।
फिर भी कर सम्मान मंत्री का उच्चासन बैठाय जी ।।६२।।

हाथ जोड़कर बोला सेठ यों सेवा दो फरमाय ।
इधर उधर की बातें करके प्रधान जी दरसाय जी ।।६३।।

पुत्री आपकी मानवती कहां मुझे नजर नहीं आय ।
सेठ कहे वह अभी गई धार्मिक शाला मांय जी ।।६४।।

चिंतित होकर सेठ सोच रहा क्या गुनाह कर आई ।
देख सेठ का आनन सत्वर प्रधान यों दरसाई जी ।।६५।।

भाग्यवती है पुत्री आपकी महाराजा दिल चाय ।
पाणिग्रहण उनसे करने की दीनी बात दरसाय जी ।।६६।।

सुनकर हर्ष विषाद हुआ अति सेठ हृदय के मांय ।
राजरानी होगी पुत्री पर नृप विश्वास है नाय जी ।।६७।।

प्रधान बोला सोच रहे क्या संबंध न आया दाय ।
नहीं नहीं यह बात नहीं है डूबा खुशी के मांय जी ।।६८।।
यदि आपको संबंध पसंद है, सेठ करे स्वीकार ।
फिर भी शंका मिटी न मन की सोचे बारम्बार जी ।।६९।।
प्रधान कारण समझ गया पर आगे न बात बढ़ाई ।
भूल जाय इस खातिर उसने चर्चा अन्य चलाई जी ।।७०।।
धर्म कौन सा आप पाल रहे कहो सेठ निज बात ।
अहिंसा, संयम, तप प्रधान है जैन धर्म विख्यात जी ।।७१।।
संक्षेप में निज धर्म कर्म को सेठ उन्हें समझाय ।
इतने में वहां मानवती भी पढ़कर के गई आय जी ।।७२।।
पिता चरण छू प्रधान जी से कीना शिष्टाचार ।
रूप नम्रता के सदगुण से पाया हर्ष अपार जी ।।७३।।
प्रधान लेकर विदा वहां से भूप पास में आय ।
मानवती का संबंध पक्का दीनी बात सुनाय जी ।।७४।।
शुभ मुहूर्त को देख लग्न हित बरात की तैयार ।
गज हौदे पर सजा सवारी आये सेठ के द्वार जी ।।७५।।
तोरण बांध लिया चंवरी में विवाह रस्म सब कीनी ।
बाल युवा जन इस प्रसंग की सभी प्रशंसा कीनी जी ।।७६।।
कमी न रखी कहीं सेठ ने खर्चा किया अपार ।
फिर भी शंका रही हृदय में क्या हो भावि विचार जी ।।७७।।
विवाह समय भी मानवती दिल नहीं है खुशी लिगार ।
सावधान रहना यों मानों कोई रहा उच्चार जी ।।७८।।

निकट भविष्य में तेरे ऊपर विपत्तिएं रहीं आय ।
उनसे बचना कठिन समझ यों रहा कोई सुनाय जी ॥७९॥

खुशियां मना रहे हैं सारे गहरा दिल रंग राग ।
जोड़ी सुन्दर इन दोनों की सराह रहे हैं भाग्य जी ॥८०॥

विदा समय में निज पुत्री को माता गले लगाय ।
विरह व्यथा वश निज नयनों से अश्रु रही टपकाय जी ॥८१॥

शिक्षा दे रही मात पुत्री को लेना दिल में धार ।
छोटे बड़े सभी के साथ में रखना सद्व्यवहार जी ॥८२॥

विवाह हुआ मर्यादित जीवन जीना है अवधार ।
प्राण प्रण से रक्षा करना शील धर्म आचार जी ॥८३॥

मात पिता सब जन से मिलकर विदा हुई है बाई ।
कई कल्पना लेकर मन में निज ससुराल सिधाई जी ॥८४॥

सजे सजाये भवन बीच में बैठी सजी सजाई ।
पति बाट जो रही पलक भी उसे नींद नहीं आई जी ॥८५॥

पहर-पहर निकलते चारों पहर निकल गई रात ।
भोर हुई पर हुए न अब तक पति देव साक्षात जी ॥८६॥

सूर्योदय होते ही महल में आये हैं महिपाल ।
पति दर्शन होते ही सेज तज आई सत्वर चाल जी ॥८७॥

किंतु पति तो क्रोधावेश में दूर खड़े रहे आन ।
पति मुख को लख मन में आया नहीं मुझ पर कुछ ध्यान जी ॥८८॥

प्रथम ग्रास में ही मक्खी मानवती हुई म्लान ।
सोचे मन में बार-बार अब होनहार बलवान जी ॥८९॥

फिर भी आगे बढ़ चरणों में रही है सिर को डाल ।
बोली नाथ हूं चरण सेविका गुस्सा देवो टाल जी ॥९०॥

पीछे हटकर बोले भूप यों क्यों चरणों को छूओ ।
तुम तो पति को चरणोदक पा अब बना घुमाओ जी ॥९१॥

जो जो बातें सुनी बाग में सब ही दी दरसाय ।
सुनकर पति के मुख से उसको सारी यादें आय जी ॥९२॥

बोली नाथ वह सखियों के संग कीना था उपहास ।
मेरे नाम को लेकर तूने दीनी चुनौती खास जी ॥९३॥

अनिच्छन से शब्द निकल गये इतना तूल न दीजे ।
गुनाह हो गया भूल चूक में क्षमा मुझे बख्शीजे जी ॥९४॥

हम-तुम बहने की बातों को [illegible] ।
जो-जो बातें मुख से निकली क्षमा मुझको दीजे जी ॥९५॥

अनुनय विनय किया चरणों में नृप ने दिया न ध्यान ।
कातर स्वर में बोली नाथ कुछ मेरी ओर दें कान जी ।।९६।।

क्रोध शांत नहीं हुआ भूप का मंत्री को बुलवाय ।
आदेश मेरा है एक स्तंभ पर महल सद्य बनवाय जी ।।९७।।

"जैसी आज्ञा" कह कर मंत्री चला गया उस बार ।
चन्द दिनों में महल बनाया कारीगर हुशियार जी ।।९८।।

"प्राज्ञ" प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे क्रोध महा चंडाल ।
बड़े-बड़े पुरुषों को भी यह कर देवे बेहाल जी ।।९९।।

मानवती यह समझ गई अब बंदी मुझे बनाय ।
बार-बार की क्षमा याचना पर नहीं माफ कराय जी ।। १००।।

सहज भाव से सखियों के संग मैंने कीनी बात ।
सत्य समझ ली उन बातों को क्षमा करें हे नाथ जी ।।१०१।।

भूप कहे तब तक न शांति हो मेरे दिल के मांय ।
जब तक दुनिया में नहीं तेरा मान भंग हो जाय जी ।।१०२।।
देखूं तेरी कैसे प्रतिज्ञा होगी पूर्ण इस स्थान ।
ऐसी जगह रखूंगा तुझको भूल जायगी मान जी ।।१०३।।
स्वयं अकेली रहे वहां पर कोई भी नहीं आय ।
सदा तरसती रहो वहां नहीं मानव मुख दिखलाय जी ।।१०४।।
सुनते-सुनते मानवती के स्वाभिमान प्रकटाय ।
दया नहीं दिल में स्वामी के ऐसा मुझे लखाय ।।१०५।।
जिस दिन राजन प्रतिज्ञा पूरण कर दिखलाऊं ।
मात पिता की पुत्री सच्ची मानवती कहलाऊं जी ।।१०६।।
आदेश दे दिया जाओ यहां से स्तंभ महल के मांय ।
आज्ञा पालक रहे पास अरू पहरेदार बैठाय जी ।।१०७।।
आर्तध्यान कर सोचे मन में कर्मोदय हुआ आय ।
किसी जन्म में हंस-हंस बाधे आवे वे ही प्रकटाय जी ।।१०८।।
आयबिल आदि करे तपस्या पंच परमेष्ठी ध्यावे ।
नहीं किसी का दोष स्वयं का ऐसे मन में लावे जी ।।१०९।।
क्रोध शांत होगा जब पति का दर्शन देंगे आय ।
इस आशा में दिन कई वीते नहीं दर्शन पाय जी ।।११०।।
बैठे-बैठे क्या होगा यों मानवती दिल लाय ।
होय प्रतिज्ञा पूरण मेरी ऐसा करूं उपाय जी ।।१११।।
मीठे शब्द से पहरेदार को भाई शब्द सुनाय ।
दुखियारी के बनो सहायक इस विरिया के मांय जी ।।११२।।

प्रिय शब्द भाई का सुनकर गद् गद् वह हो जाय ।
महारानी जी मुझ चाकर को भाई कह बतलाय जी ॥११३॥
क्या सेवा, कर जोड़ खड़ा मैं आज्ञा दो फरमाय ।
मैं तो हूं चरणों का चाकर नम्र शब्द दरसाय जी ॥११४॥
चाकर नहीं भाई हो मेरे यहां तो तुम ही सहाई ।
करो काम तो अभी तुम्हें दूं अपनी बात सुनाई जी ॥११५॥
बहन हितार्थ प्राण समर्पण कर देगा यह भाई ।
नहीं होने का काम करूं मैं देवें आप फरमाई जी ॥११६॥
पाकर स्वीकृति पत्र साथ में हार दिया पकड़ाई ।
यह हार लो तुम भाभी को गले में दो पहनाई जी ॥११७॥
लेने में की आना कानी दिया उसे समझाई ।
यह पत्र धन मित्र सेठ को दे देना कर मांहि जी ॥११८॥
जब संध्या में कोई न देखे सेठ द्वार पर आय ।
गुप्त रूप में सेठ हाथ में पत्र दिया पकड़ाय जी ॥११९॥
कौन दे गया पत्र हाथ में सेठ समझ नहीं पाय ।
पत्र खोलकर पढ़ा पिता ने ऊहा पोह कराय जी ॥१२०॥
लिखा आपकी पुत्री बंदी सरवर महल के मांय ।
यहां तक सुरंग बनाकर मेरी कीजे आप सहाय जी ॥१२१॥
अक्षर है यह मानवती के लिया सही पहचान ।
किंतु पत्र के भावों का नहीं पाया पूरा ज्ञान जी ॥१२२॥
सारी रात सोचते निकली पा लीना सब भेद ।
बंदी हो गई पुत्री मेरी पाया मन में खेद जी ॥१२३॥
सूर्योदय होते ही सेठ गया मजदूरों के पास ।
मुखिया से मिल सुरंग की सब बात बतादी खास जी ॥१२४॥
अपने भवन से सुरंग बनायी सीधी महल में जाय ।
मानवती के पलंग नीचे सुरंग मुख गया आय जी ॥१२५॥
शीघ्र सुरंग तैयार हो गई कोई न जाने भेद ।
मजदूरों को इतना धन दिया नहीं रहा मन में खेद जी ॥१२६॥
अब नहीं मजूरी करनी चले गये निज गांम ।
जीवन भर खर्चें धन खावें बैठे-बैठे धाम जी ॥१२७॥
पिता पुत्री से मिलने रात में सुरंग से रहा जाय ।
पुत्री सोती निद्रा मांहि उसको सेठ जगाय जी ॥१२८॥
देख पिता को पास मानवती चरणों में गिर जाय ।
रुका कंठ हो पिता पुत्री को भी आंसू निकसाय जी ॥१२९॥

भरी दुख से भारी पुत्री नयनों नीर गिराय।
दु:ख हृदय में नहीं समाये जोर से रुदन मचाय जी ।।१३०।।
यह अवसर नहीं रोने का कहीं शब्द बाहर में जाय।
अत: उतर सुरंग में दोनों अपने घर आ जाय जी ।।१३१।।
घर आते ही हृदय भर गया रो रही झारमझार।
माता भी सुन आई वहां पर हो गई दु:खी अपार जी ।।१३२।।
सेठ सान्त्वना दी दोनों को करो रुदन का त्याग।
कर्मोदय को हंसते भोगे कहाँ जावेंगे भाग जी ।।१३३।।
होकर शांत मात यों पूछे कहो बेटी अवदात।
क्या कीना अपराध पति का रुष्ट हो गये नाथ जी ।।१३४।।
सखियों के संग जो हुई बातें वे सारी दरसाय।
मैंने क्षमा मांग ली उनसे पर नहीं ध्यान लगाय जी ।।१३५।।
माता बोली क्यों गई वहां तू एकान्त महल के मांय।
पति चरण में प्राण त्यागती पतिव्रता कहलाय जी ।।१३६।।
सुनकर बात मात की ऐसी मन में दु:ख अपार।
पुत्री मुख को देख पिता के निकले यों उद्गार जी ।।१३७।।
प्रिय सुनो पुत्री ने अपना सब कर्तव्य निभाया।
किंतु राजहठ से नरपति के दिल में रहम न आया जी ।।१३८।।
सेठ कहे आगम में भेद नहीं, पुरुष होय चाहे नार।
श्रेष्ठ समझ कर पुरुष नार को देता कष्ट अपार जी ।।१३९।।
मानवती का संकट नाशे ऐसा करो विचार।
किसी तरह हो सफल प्रतिज्ञा पुत्री की इस बार जी ।।१४०।।
पूरा हुआ विचार विमर्श तब सबका एक विचार।
मानवती जोगन का वेश कर ले निजकाम सुधार जी ।।१४१।।
पिता पुत्री को सुरंग से ही पुन: स्थान पहुंचाई।
एक ध्येय अब सेठ साहब का लगे काम के मांही जी ।।१४२।।
उज्जैनी में रूपवती एक अद्भुत योगिन आई।
पांव खड़ाऊ भगवा वेश अरु अंग भभूत रमाई जी ।।१४३।।
चंदन तिलक लगा भाल पर वीणा है कर मांहि।
स्वर माधुर्य से जन मन कहता स्वर्ग किन्नरी आई जी ।।१४४।।
भक्ति के भजनों को श्रवण कर जनता आनन्द पाई।
आपस में यह चर्चा थी यह कौन कहाँ से आई जी ।।१४५।।
घर-घर में यह चर्चा चलते, भूप कान में जाय।
अद्भुत जोगिन आई नगर में सुन्दर भजन सुनाय जी ।।१४६।।

सभासदों से पूछ रहे नृप सब ही यों दरसाय ।
प्रजानाथ ऐसी जोगिन तो कहीं नजर नहीं आय जी ॥१४७॥
हजूर चाहो तो बुलवावें, अभी राज के मांय ।
राजा बोला हां बुलवावो लूं दर्शन मैं पाय जी ॥१४८॥
भृत्य गया जोगिन के पास में सभी बात दरसाई ।
भूप हमारे दर्शन चाहे चलो राज के मांहि जी ॥१४९॥
बात श्रवण कर अद्भूत जोगिन सभा भवन में आई ।
सिंहासन तज मानतुंग ने दीना शीश झुकाई जी ॥१५०॥
राजा बोला सभी नगर तो सुनकर हुआ विभोर ।
कृपा करो भक्ति रस में अब नाच उठे मन मोर जी ॥१५१॥
सभी सभासद हां में हां कर बोलें भजन सुनायें ।
तत् क्षण जोगिन वीणा लेकर मधुर कंठ से गाये जी ॥१५२॥
भजनावली से मुग्ध हो गये रहा न कुछ भी ध्यान ।
भक्ति रस की स्वर लहरी को सुन रहे सबके कान जी ॥१५३॥
सुनते ही सब मुख से निकला धन्य-धन्य अवतार ।
ऐसा गायन सुना न हमने जो जीवन का सार जी ॥१५४॥
टकटकी लगा कर भूप देख रहा जोगिन को उस बार ।
कैसा रूप विधि से पाया निश्छल है उणियार जी ॥१५५॥
लघु वय में भभूत रमा कर ले लीना सन्यास ।
मधुर कंठ कोयल सा इनका मैं रहूं चरणों पास जी ॥१५६॥
इतने में यों लगा भूप को देखा कहीं यह रूप ।
हां, हां याद आ गया ऐसा मानवती स्वरूप जी ॥१५७॥
सोचा मानवती तो रहतीं स्तंभ महल के मांय ।
पहरेदार बैठा है वहां तो कैसे निकला जाय जी ॥१५८॥
शंका फिर भी मिटी न मन की देखूं वहां पर जाय ।
द्वारपाल को बुला पास में यों आदेश सुनाय जी ॥१५९॥
कहा सारथी को सत्वर वह रथ को करे तैयार ।
स्तंभ महल पर जाना मुझको नहीं लगावे वार जी ॥१६०॥
सुनकर शब्द अचानक नृप के सब जन विस्मय पाय ।
मानवती भी समझ गई सब शंका भूप मन आय जी ॥१६१॥
भेद न पावे ऐसे ढंग से जाना है इस बार ।
राजा के जाते ही वह भी पहुंची भवन मझार जी ॥१६२॥
वेश बदल जोगिन का मानवती सो गई महल में जाय ।
थोड़ी देर में पहुंच गया है शंका लेकर राय जी ॥१६३॥

पहरेदार को जल्दी में ही दी आवाज लगाय।
तत्क्षण खोलो द्वार महल का आये हैं महाराय जी ॥१६४॥
सुन करके भी नहीं बोली वह, मानों नींद रही आय।
द्वार खुला झट घुसा महल में पलंग पास में जाय जी ॥१६५॥
सोती रही मानवती वहां पर कुछ भी बोली नांय।
देख भूपति व्यंग रूप में ऐसी बात सुनाय जी ॥१६६॥
महारानी मस्ती में सोती कोई आये कोई जाय।
यह सुनकर हड़बड़ा उठी झट कर जोड़ी सिर नवाय जी ॥१६७॥
भाग्य खुला है आज मेरा यह पाक हो गया स्थान।
आज नाथ के चरण पड़ूं मैं अच्छे हैं दिनमान जी ॥१६८॥
भाग्य खुले या फूटे नींद में विघ्न हुआ इस बार।
खाना अरु सो जाना भूप कहे लीना तुमने धार जी ॥१६९॥
सभी कृपा है नाथ आपकी जैसा आप फरमाय।
और काम क्या मेरे सामने कौन यहां पर आय जी ॥१७०॥
भूप देख रहा इधर-उधर यहां कहीं पता लग जाय।
किंतु कुछ भी नहीं लख वहां पर मन शंका मिट जाय जी ॥१७१॥
एक रूप रंग के जग में देखे मनुज अनेक।
शंका व्यर्थ हो गई मन में खो गया हृदय विवेक जी ॥१७२॥
पुन: वहां से चलकर राजा आ गया अपने स्थान।
त्वरित गति से मानवती भी बैठी आसन आन जी ॥१७३॥
भूपति का आगमन श्रवण कर सभा जम गई ऐसी।
राजा ने देखा तो सोचा है यह पहले जैसी जी ।'१७४॥
आ बैठा नृप सिंहासन पर सब करते सम्मान।
जोगिन ऐसे बैठी धुन में लगा हुआ हो ध्यान जी ॥१७५॥
प्रधान बोला वहां पर कोई खास काज था राय।
नहीं प्रधान जी भ्रम हो गया था मेरे दिल के मांय जी ॥१७६॥
अब तो निकल गई सब शंका नृप ने हाँ कर लीनी।
सुनकर जोगिन बात भूप की थोड़ी मुस्करा दीनी जी ॥१७७॥
पूछे भूप क्यों हंसी आ गई सुनकर मेरी बात।
क्या भ्रम मिट गया जोगिन बोली सुनकर के अवदात जी ॥१७८॥
संसारी तो रहे हमेशा भ्रम जाल के मांय।
कैसे मुक्ति पा सकते हो सुनकर विस्मय आय जी ॥१७९॥
भूपति के दिल जगी जिज्ञासा जरा शांत करावें।
मात पिता है कौन आपका परिचय तो बतलावे जी ॥१८०॥

मालूम होता तुम तो राजन अविवेकी अनजान ।
यदि होता कोई अन्य पुरुष तो ले लेता तुम प्राण जी ।।१८१।।

ऐसी बात श्रवण करके भी शांत रहा भूपाल ।
साधुजन को क्या कह सकते चाहे देवें गाल जी ।।१८२।।

फिर भी नृप ने प्रश्न किया यह कैसे आप फरमाई ।
राजन सुन लें ऐसी बातें होती गृहस्थी मांहि जी ।।१८३।।

पूछो संत से ईश्वर आदि तत्व ज्ञान की बात ।
भूत भविष्य की चर्चा या हो भव सुधार अवदात जी ।।१८४।।

जोगिन की सुन बात भूपति लज्जित हुआ अपार ।
चरण स्पर्श कर क्षमायाचना कर रहा बारम्बार जी ।।१८५।।

भूल हो गई भारी मुझ से नम्र शब्द कहे राय ।
इस छोटी सी उमर मांहि कितना ज्ञान दिखाय जी ।।१८६।।

वही मूर्खता कर रहे राजन् तन से उमर नाय ।
सन्यासी की ज्ञान अवस्था होती है जग मांय जी ।।१८७।।
आयु से छोटा कह देना है उनका अपमान ।
जोगिन की सुन सभा धन्य कह महिमा करी बखान जी ।।१८८।।
हम तो समझते आप निपुण है केवल गायन मांय ।
किंतु आपका गहरा ज्ञान सुन विस्मय हमको आय जी ।।१८९।।
जोगिन बोली गम्भीर ज्ञान को आप लोग क्या जानें ।
आत्म ज्ञान में रमण करे नर वो ही रस पहचाने जी ।।१९०।।
राजा प्रजा सब संसारी सत्य ज्ञान नहीं कीना ।
भ्रम जाल में फंस करके ही जाना जीवन जीना जी ।।१९१।।
सुनकर भूपति सोचे मन में महाज्ञानी यह संत ।
दिव्य ज्ञान से जान लिया है मेरा सब वृतान्त जी ।।१९२।।
हाथ जोड़कर अर्ज करी नृप मुझ मन की लीनी जान ।
जोगिन बोली छिपा हुआ क्या है घट-घट का ज्ञान जी ।।१९३।।
अवसर देख खड़ी हो गई आशीर्वचन सुनाय ।
जाने भी नहीं कहे राजा ने [illegible] जी ।।१९४।।
कृपा करो तुम [illegible] मुझको दास बनाओ ।
[illegible] में हम नहीं [illegible] जी ।।१९५।।
संतों के भी यह बंधन है ऐसा [illegible] ।
[illegible] जी ।।१९६।।
[illegible] ।
जोगिन [illegible] जी ।।१९७।।

अवसर दे सेवा का मुझको कहकर जल मंगवाय।
मना किया जोगिन ने फिर भी राजा माना नांय जी ।।१९८।।
प्रक्षालन कर चरणोदक को भूपति झट पी जाय।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे नृप भक्ति बतलाय जी ।।१९९।।
इस कारज को जोगिन अच्छा नहीं समझा मन मांय।
पतिदेव चरणोदक पीवे रही मानवती पछताय जी ।।२००।।
असली रूप प्रकट कर लूं मैं कीना हृदय विचार।
किन्तु राज हठ भूप दर्प लख शांत हुई उस वार जी ।।२०१।।
राजा आग्रह करके कह रहा रहिये महल मंझार।
प्रण करता हूं सदा आपकी चलूं आज्ञा अनुसार जी ।।२०२।।
हां-हां करते सभी सभासद बोले आपके दास।
नाथ हमारे करें प्रार्थना पूरण करिये आस जी ।।२०३।।
आप सभी का आग्रह मुझको बंधन में दिया डाल।
किंतु भीड़ में रहना योगी देते उसको टाल जी ।।२०४।।
एकांत स्थान ही पसन्द हमें जहां नहीं दूसरा आय।
चले साधना सुखद हमारी वही स्थान हम चाय जी ।।२०५।।
आप सभी की देख भावना एक बार आ जाऊं।
दिन में कभी आपको दर्शन देकर वापिस जाऊं जी ।।२०६।।
हाथ जोड़कर सभी सभासद दीना शीश नमाय।
सत्यवादी होते हैं साधु ऐसी मन में लाय जी ।।२०७।।
जोगिन बोली मेरी शर्तें हो नृप को स्वीकार।
बिना सुने ही भूपति बोला स्वीकृत शर्त हजार जी ।।२०८।।
अच्छी तरह से पहले सुन लो करलो खूब विचार।
नम्र भाव हो नरपति बोला फरमावे लूं धार जी ।।२०९।।
पहली शर्त है मुझ आज्ञा बिन नगर छोड़ नहीं जावे।
दूजी शर्त यह कहना मेरा सत्य रूप हो जावे जी ।।२१०।।
एक शर्त क्या? अनेक शर्तें हैं मुझको स्वीकार।
भूप कहे दर्शन हो जावे धन्य मानूं अवतार जी ।।२११।।
तब से ही नित सभा भवन में जोगिन जी आ जाय।
क्षण की देरी युग सम माने नृप व्याकुल हो जाय जी ।।२१२।।
उज्जैनी का एक वणिक चल मुंगी पट्टण आय।
वहां मार्ग में मिला एक नर प्रेम सहित ठहराय जी ।।२१३।।
पूछा यहां का नाथ कौन है सभी सुनावो हाल।
सत्यवादी नीतिज्ञ यहां का दलथंभण भूपाल जी ।।२१४।।

गुण मंजरी है महारानी दीन दुःखी प्रति पाल ।
कन्या एक रत्नवती उनके शचि सम रूप रसाल जी ॥२१५॥
इतने में रथ आया उधर ही जा रहा बाग मंझार ।
सत्वर वणिक हो गया पीछे देखूं किया विचार जी ॥२१६॥
रत्नवती सखियों के संग में पहुंच गई उद्यान ।
वसन्त क्रीड़ा मांहि मस्त हुई नहीं समय का ध्यान जी ॥२१७॥
वह वणिक भी बड़ा रसिक था छिपकर रहा निहार ।
निकल गई छः घड़ियां तथापि होश न रहा लिगार जी ॥२१८॥
छिपकर बैठे हुए वणिक को देख लिया वनपाल ।
हाथ पकड़कर कहे वणिक क्या देख रहा बदचाल जी ॥२१९॥
राजकुमारी के सन्मुख लाकर कह दी बात तमाम ।
सुनकर लाल नयनकर यहां आया किस काम जी ॥२२०॥
बागवान कहे अपराधी को दण्ड आप फरमावें ।
हुक्म होय तो अभी इसे भूपाल पास ले जावे जी ॥२२१॥
यह सुनकर के कांप गया वह क्या होगा भगवान ।
कहे कुमारी अब डरता है कहां खो गया ज्ञान जी ॥२२२॥
कौन कहां के रहने वाले परिचय दो बतलाय ।
उज्जैनी का मैं वासी जाति वणिक कहलाय जी ॥२२३॥
छिप छिपकर उद्यान बीच में तुम क्या रहे निहार ।
सत्वर बोला सुन्दरता लख, आ गया लोभ अपार जी ॥२२४॥
यह सुन करके सारी सखियां, एक साथ मुस्काई ।
वाह रे वणिक डरते भी हो, अरु वाणी में सच्चाई जी ॥२२५॥
सुनलो सखियों मैं कहती हूं इसका क्या है दोष ।
सखी हमारी है ही ऐसी भरा रूप का कोष जी ॥२२६॥
बोला वणिक आपने मुझको सांची किया करार ।
किन्तु राजकुमारी को लख मुझ मन हुआ विकार जी ॥२२७॥
बोला मैं उज्जैनी नर नाम सौम्य है [illegible] ।
सुन्दरता को [illegible] का [illegible] लिखि गई [illegible] जी ॥२२८॥
मानतुंग राजा के गुणों को पहिले भी सुन रखा ।
पुनः आज सुनकर के कुमारी निर्णय होगा पक्का जी ॥२२९॥
कुछ समय तक सोच [illegible] की दृष्टी में [illegible] ।
आगे सखी और नाचों गावें, [illegible] हुआ निहाल जी ॥२३०॥
राजकुमारी हर्षित होकर [illegible] महल में आई ।
[illegible] [illegible] मुनि [illegible] भाई [illegible] जी ॥२३१॥

हंसी खुशी से गई थी यहां से क्यों उदास हो आई।
सखियों से पूछे तब सबने बीतक बात सुनाई जी ॥२३२॥
पहले तो प्रसन्न मुख थी सुनी वणिक से बात।
तब से ही वस गये हैं दिल में उज्जैनी के नाथ जी ॥२३३॥
सुनकर के रानी ने नृप को सारी बात सुनाई।
उज्जैनी नर नाथ साथ में संबंध चाहे बाई जी ॥२३४॥
प्रधानजी को बुला त्वरित ही यों आदेश सुनाये।
जाकर के उज्जैनी भूप से संबंध तय कर आयें जी ॥२३५॥
जैसी आज्ञा कहकर वहां से, निज स्थान पर जाय।
बड़े ठाठ से हुआ रवाना उज्जैनी में आय जी ॥२३६॥
जोगिन के दर्शन बिन वहां पर व्याकुल है भूपाल।
प्रात:काल से करे प्रतीक्षा कब आयेगी चाल जी ॥२३७॥
इतने में ही द्वारपाल आ बोला जय जयकार।
भुंगी पट्टण के प्रधान मिलना चाहे इस बार जी ॥२३८॥
राजा बोला अन्दर लावो देकर के सत्कार।
मैं नहीं जानूं कैसे आए मन में करे विचार जी ॥२३९॥
भूप सामने आ प्रधान ने कीना शिष्टाचार।
सादर आसन देकर उनको, पूछ रहे उस वार जी ॥२४०॥
कैसे कष्ट किया आने का कारण दो दरसाय।
प्रधान बोला भेंट आपको स्वामी देना चाय जी ॥२४१॥
देना चाहे भेंट प्रेम से कौन करे इन्कार।
उत्तम वस्तु लाए हो तो अवश्य करें स्वीकार जी ॥२४२॥
प्रधान लेकर एक चित्र पर दीना भूप के हाथ।
रूप कांति को लखकर राजा सोचे शचि साक्षात जी ॥२४३॥
मुग्ध मना हो मानतुंग नृप देखे बारम्बार।
चित्र या प्रत्यक्ष खड़ी यह करने लगे विचार जी ॥२४४॥
नृप की चेष्टा देख उसी क्षण बोला यों प्रधान।
यह अजीब है सजीव देखें महागुणों की खान जी ॥२४५॥
प्रधान की सुन बात भूप भी गहरा गया ललचाय।
भेंट अनुपम रखी सामने मेरे पास में लाय जी ॥२४६॥
भूप कहे तुम थके हुए हो कर लीजे विश्राम।
सोच समझ कर जवाब दूंगा, जल्दी का नहीं काम जी ॥२४७॥
देख पलटती बात भूप से कहे मंत्री तत्काल।
स्वीकृत करली, हां नृप बोला कब कीनी इन्कार जी ॥२४८॥

राजा बोला मैं तो कहता कर लें कुछ आराम।
सेवक साथ चला है तत्क्षण सोच बात अंजाम जी ॥२४९॥
जोगिन अब तक नहीं आई थी देख रहा भूपाल।
कभी चित्रपट कभी जोगिन का रक्खे पूरा ख्याल जी ॥२५०॥
भूप विमोहित रत्नवती पर कब मैं इसको पाऊं।
किन्तु वचन बद्ध हूँ पूरा जोगिन आज्ञा चाहूँ जी ॥२५१॥
यही भाव आ रहे हृदय में जल्दी जोगिन आय।
रत्नवती संग विवाह करण की अनुमति दे बक्षाय जी ॥२५२॥
इतने मांहि कर्ण कुहर में वीणा की झंकार।
जोगिन आई समझ नृपादि हो गये हैं तैयार जी ॥२५३॥
ज्यों ही आई सभा भवन में, सब जन शीश नमाय।
आशीर्वाद दे सभी जनों को बैठी आसन आय जी ॥२५४॥
योगिन देखे आज भूप के मुख पर नहीं उल्लास।
जोगिन बोली राजन दुविधा क्या है दिल में खास जी ॥२५५॥
भूप समझ गया जान गई जोगिन मन के भाव।
कहने की हिम्मत नहीं होती क्या है मन में चाव जी ॥२५६॥
पड़ा चित्रपट देख समझ गई इसमें उलझा राय।
जीवन विलासी है राजा का अतः रहे ललचाय जी ॥२५७॥
मौन देख राजा को जोगिन बोली क्या मन आश।
चित्रपट में देख सुन्दरी बंधे मोह की पाश जी ॥२५८॥
दिव्य ज्ञान से जाना इसने ऐसा मन विश्वास।
अतः साफ कह देना अच्छा जो हो मन में खास जी ॥२५९॥
मुंगी पट्टण नृप दल थंभण की पुत्री यह खास।
चित्रपट यह प्रधान लाया रखकर दिल में आस जी ॥२६०॥
रत्नवती से विवाह करो यों कर रहा आग्रह पूर।
जोगिन बोली स्वीकृति है क्या ? नृप कहे अभी अधूर जी ॥२६१॥
अनुमति करो आप तब ही मैं बात करूं स्वीकार।
मिथ्या बात करो तुम मुख से मन से हो तैयार जी ॥२६२॥
तुम जैसे कामी पुरुषों को लाख लाख धिक्कार।
अन्तःपुर तो भरा पड़ा है फिर क्यों चाहो नार जी ॥२६३॥
समझ रहे हो काम क्रीड़ा की पुतली केवल नार।
पुरुष तुल्य नारी का जग में पूरण है अधिकार जी ॥२६४॥
शीश झुकाकर नृप ने सुन ली जोगिन की फटकार।
शर्मा करके बोला यह तो लाया मन्त्री उपहार जी ॥२६५॥

राजाओं का काम यही है करो भेंट स्वीकार।
जोगिन बोली अपयश होगा जो हो गये इन्कार जी ।।२६६।।
मेरे मुख से जाने बिन ही कर लीना स्वीकार।
नहीं निभाए वचन आपने चलती हूं इस बार जी ।।२६७।।
जोगिन के सुन वचन त्वरित ही सिंहासन तज राय।
सन्मुख आकर पैर पकड़ लिए आप कहीं नहीं जाय जी ।।२६८।।
कातर स्वर से भूप कहे चाहे वचन भंग हो जाय।
नहीं जाने दूं प्रधान चाहे आया वैसे जाय जी ।।२६९।।
वचन भंग से अपयश होगा जोगिन यों दरसाय।
उज्जैनी भूप सुन सकता है चाहे दुनिया अपयश गाय जी ।।२७०।।
किंतु आपकी आज्ञा का उल्लंघन मैं नहीं चाहूं।
कुछ भी हो मैं दर्शन लाभ से वंचित नहीं होना चाऊं जी ।।२७१।।
पति विह्वलता देखे मानवती हृदय गया भर आय।
रत्नवती से विवाह करें मैं कहती हूं हे राय जी ।।२७२।।
आवेश वश यह आज्ञा दी थी नरपति यों दरसाय।
नहीं दुःख आवेश नहीं कुछ मेरे दिल में राय जी ।।२७३।।
तब तो एक प्रार्थना मेरी करना है स्वीकार।
मुंगी पट्टण संग चलने की हां भरले इस बार जी ।।२७४।।
कुछ विचार कर जोगिन बोली ऐसी आपकी मर्जी।
कोई हरज नहीं स्वीकृत है भूप तुम्हारी अर्जी जी ।।२७५।।
उसी समय आज्ञा फरमा दी प्रधान को बुलवाय।
प्रसन्न होकर शीश नमाया ठहरा वहीं पर जाय जी ।।२७६।।
बरात बनाकर उज्जैनी नृप लीनी सेना लार।
हाथी घोड़े रथ पैदल कई लश्कर साथ अपार जी ।।२७७।।
राजा के रथ पास-पास में जोगिन का रथ जाय।
वीणा मांहि वस्त्र भूषण अमूल्य साथ ले जाय जी ।।२७८।।
मुंगीपुर का प्रधान संग में राह दिखाता जाय।
ऐसा नहीं हो अटवी मांहि कहीं भटक नहीं जाय जी ।।२७९।।
मालव देश की सीमा लंघकर आगे बढ़ते जाए।
उबड़-खाबड़ भूमि मांहि सभी तंग हो जांय जी ।।२८०।।
श्रम से थकित हो गये सारे ऐसे मन में आय।
कहीं मिले रमणीक स्थान तो वहीं विश्राम कराय जी ।।२८१।।
आगे जाते कुछ दूरी पर वाग दृष्टि पथ आय।
अच्छा स्थान देख सब ही का ठहरे यों मन चाय जी ।।२८२।।

जोगिन बोली थक गई गहरी स्नान करण को जाऊं।
कहता नरपति अभी आपके मैं भी साथ आऊं जी ॥२८३॥

सुनकर कहती क्या कहते हैं जरा शरम नहीं आय।
पुरुष सामने सभ्य नारियें कभी स्नान न कराय जी ॥२८४॥

भूल हो गई संभल नरपति बात बदल दरसाय।
रक्षा के हित चलूं वहां कोई वन्य जन्तु आ जाय जी ॥२८५॥

सबसे भारी खतरा नार को पुरुषों का बतलाय।
जिसमें भी एकान्त स्थान हो फिर मत पूछो राय जी ॥२८६॥

हमें कहां खतरा है राजन जंगल भवन समान।
चिंता तज दे अभी अकेली कर आऊंगी स्नान जी ॥२८७॥

वीणा हाथ में लेकर जोगिन जहां वापी तहां जाय।
जहां तक ओझल हुई नहीं है वहां तक देखे राय जी ॥२८८॥

मलमल करके स्नान किया फिर तन श्रृंगार सजाय।
बना अप्सरा रूप वहां पर वीणा कहीं छिपाय जी ॥२८९॥

समय लग गया ज्यादा सोचे क्यों अब तक नहीं आई।
स्थान भयंकर कोई जन्तु लगता गया है खाई जी ॥२९०॥

राक्षस भूत प्रेत आदि या जल जन्तु खा जाय।
कहीं विपत्ति मांहि फंस गई भूपति शंका लाय जी ॥२९१॥

अधीर हो नृप चला अकेला वापि ऊपर जाय।
इधर-उधर दौड़ाई दृष्टि कहीं नजर नहीं आय जी ॥२९२॥

कहां गई है जोगिन यहां से, चक्कर भूप लगाय।
जल में डूब गई अथवा वह गगन मांहि उड़ जाय जी ॥२९३॥

देख भूप को सुरांगना ने गायन दिया उच्चार।
आकर्षित हो चला उधर ही बैठी अप्सरा नार जी ॥२९४॥

मुग्ध हो गया स्वर लहरी में खड़ा पास में आय।
आंख खोल कर बोली अप्सरा कौन कहां से आय जी ॥२९५॥

कहे भूपति पहले अपना दो परिचय बतलाय।
यहां भयंकर अटवी मांहि किसको रही सुनाय जी ॥२९६॥

वह बोली मेरा परिचय क्या चित्र विचित्र कहानी।
फिर बतलाऊं परिचय पहले, लेऊं आपकी जानी जी ॥२९७॥

मैं हूं उज्जैनी नगरी का मानतुंग नर राय।
अब तुम अपनी बात कहो इस वन में कैसे आय जी ॥२९८॥

प्राज्ञ 'प्रसादे' 'सोहन' मुनि कहे उलझ गया है राय।
त्रिया चरित्र को वह क्या समझे ब्रह्मा पार नहीं पाय जी ॥२९९॥

हे राजन मैं खेचर कन्या प्रण ऐसा कर लीना ।
यह वृतान्त भी तात सामने एक वक्त कह दीना जी ।।३००।।

विद्याबल से देख उन्होंने मुझको यह दरसाया ।
इस बन में प्रण पूरा होगा यह कह यहां बिठाया जी ।।३०१।।

उत्सुकता से नृप यों बोला क्या प्रण है बतलाये ।
चरण प्रक्षालन करके मेरा चरणोदक पी जाये जी ।।३०२।।

बनकर अश्व बैठा पीठ पर चारों ओर घूमाय ।
दोनों हथेली ऊपर रखकर चरण मुझे चलाये जी ।।३०३।।

तीन प्रतिज्ञा जो भी मेरी पूरण नर करवाय ।
उसी साथ में समझो मेरा पाणिग्रहण हो जाय जी ।।३०४।।

सुन प्रतिज्ञा नृप के दिल में असमंजस आ जाय ।
ऐसी सुन्दरी मिलना मुश्किल प्रण यह कठिन बताय जी ।।३०५।।

क्या इस प्रण का भंग करो नहीं नृप निज भाव सुनाय ।
यह शर्त तो मेरी कभी भी भंग न होने पाय जी ।।३०६।।

किस कारण से आप कह रहे अप्सरा वो दरसाय ।
भंग करो तो इच्छा मेरी विवाह की हो जाय जी ।।३०७।।

खेचर आये ऐसे-ऐसे दिन को कर दें रात ।
उनकी भी नहीं मानी मैंने प्रण भंग की बात जी ।।३०८।।

नरपति बोला एक वक्त फिर कर लो हृदय विचार ।
बोली राजन् कर लीना कोई आवेगा इस बार जी ।।३०९।।

विद्याबल मिथ्या नहीं होता मिलेगा निश्चय आय ।
इसीलिए तो दो दिन पहले पिता यहां रख जाय जी ।।३१०।।

राजा बोला क्या ये शर्तें आजीवन हैं तुम्हारी ।
नहीं एकदा पूर्ण कर दें फिर तो उनकी नारी जी ।।३११।।

लौकिक भय भी सता रहा था भूपति को इस बार ।
किंतु सोचे ऐसी सुन्दरी मिलना है दुष्वार जी ।।३१२।।

मुझे अभी विश्वास दिला दो कोई बात न जाने ।
इस वन मांहि कौन देखता तुम तो हो दीवानें जी ।।३१३।।

नारी पेट में बात टिके नहीं नृप कहे जग विख्यात ।
वह बोली यदि नार छिपावे ब्रह्मा न जाने बात जी ।।३१४।।

मुझे वचन दो नहीं कहूंगी हो जावे विश्वास ।
देती वचन मैं आप सिवा नहीं जाने जो खास जी ।।२१५।।

शर्त पूरी करने को दोनों आये बावड़ी पास ।
चरणोदक को पिया भूपति धर मन में उल्लास जी ।।३१६।।

बनकर अश्व बिठा पीठ पर नृप चक्कर वहां लगाये।
उसी तरह से निज हाथों पर उसको वहाँ चलाये जी ॥३१७॥

वाह रे काम क्या महिमा तेरी बड़े-बड़े गये हार।
बुद्धिमान नर मानतुंग भी बना दास उस बार जी ॥३१८॥

इधर-उधर लख सोचे भूपति कोई यहां आ जाय।
उधर सती का हृदय रो रहा कर रही हूं अन्याय जी ॥३१९॥

मन में आया पति सामने प्रकट करूँ निज रूप।
किंतु मन समझाया उसने क्योंकि हठी है भूपजी ॥३२०॥

प्रण पूरा होते ही भूप कहे करो विवाह मुझ साथ।
वह बोली हो प्राणपति मुझ हो गई पक्की बात जी ॥३२१॥

वचन आपने दीने मुझको मैं भी आपको दीना।
परस्पर के वचन हो गये पाणिग्रहण कर लीना जी ॥३२२॥

अब रही साक्षी अन्य जनों की वे हैं यहां पर नांहि।
देव साक्षी करके मैं कहती आप सिवा वर नांहि जी ॥३२३॥
मन, वच, काया करके कहती जितने पुरुष जग मांहि।
बड़े पुरुष को पिता गिणु अरु छोटा समझूं भाई जी ॥३२४॥
बात श्रवण कर भूप हृदय में पूर्ण हुआ विश्वास।
चलो साथ में जहां हम ठहरे बैठो रथ में पास जी ॥३२५॥
वह बोली विद्या से पूछकर आती हूं तत्काल।
बिन आज्ञा आ जाऊं तो वह, करदे बुरा मम हाल जी ॥३२६॥
राजा बोला यहीं बैठूं मैं बन में भटक न जाय।
बोली अप्सरा सीधी आऊंगी शंका देवो हटाय जी ॥३२७॥
मानवती मन ही मन कर रही भारी पश्चाताप।
पति संग छल कपट मैं कीना सिर पर लीना पाप जी ॥३२८॥
ऐसा करना सती योग्य नहीं जो मैं कीना काम।
थोड़ी देर रुदन कर मन को हल्का कीना वाम जी ॥३२९॥
अप्सरा से जोगिन बन गई वीणा ली कर मांय।
वस्त्र छिपा वीणा में चलकर फिर पड़ाव में आय जी ॥३३०॥
नृप प्रतीक्षा कर रहा वहां पर अप्सरा क्यों न दिखाय।
इतने मांहि जोगिन को लख बोला सम्मुख आय जी ॥३३१॥
बड़ी देर लगाई तुमने कर रहा हूं इन्तजार।
मेरी आप प्रतीक्षा कर रहे हैं इतना ही प्यार जी ॥३३२॥
राजा समझा जोगिन जी तो व्यंग्य से करे उच्चार।
देख अप्सरा को सच मैंने जोगिन दीनी विसार जी ॥३३३॥

राजनीति में चतुर भूप कहे आप सिवा है कौन।
अपने दिल से ही तुम पूछो कहकर हो गई मौन जी ।।३३४।।

नृप यों बोला मेरे दिल में सदा आपका वास।
जोगिन से कुछ छिपा नहीं है जो बातें खास जी ।।३३५।।

इतने में ही प्रधान बोला कर लीना विश्राम।
आज्ञा देवें नाथ आप तो आगे हों प्रस्थान जी ।।३३६।।

मानतुंग कहे रुको यहां कुछ हटी न मेरी थकान।
तन की या मन की जोगिन कहे किसकी है राजान जी ।।३३७।।

जोगिन के सुन शब्द बिना मन आज्ञा दी फरमाय।
मारग में नृप उदास है पर जोगिन रही मुस्काय जी ।।३३८।।

मृगी पट्टणपुर के बाहर करी बाग में त्यारी।
बारात को ठहराने कारण रात बीत गई सारी जी ।।३३९।।

दलथंभण नरेश भी चलकर बारात सन्मुख आय।
दोनों नरेश मिल आपस मांहि मन ही मन हर्षाय जी ।।३४०।।
बारात आकर ठहर गई है डेरे तम्बू मांय।
जोगिन जी भी ठहर गई है एकांत स्थान में आय जी ।।३४१।।
अच्छा लग्न देख ज्योतिषी दीना है बतलाय।
ब्याह करन को जावे नृप तब जोगिन को दरसाय जी ।।३४२।।
चलें आप भी आप बिना क्या फीका काम तमाम।
जोगिन बोली विवाह कार्य में नहीं हमारा काम जी ।।३४३।।
भूल रहे हो राजन कैसे योग भोग हो साथ।
रहूं यहां एकान्त साधना करूं कहूँ सच बात जी ।।३४४।।
हम सब तो जा रहे वहां तुम रहो अकेली कैसे।
लिखा भाग्य में यहीं हमारे रहूँ अकेली ऐसे जी ।।३४५।।
लाभ उठा एकांत स्थान का कहीं चली नहीं जाय।
जो मन में थी बात भूप के साफ-साफ दरसाय जी ।।३४६।।
नहीं योगी पर कोई बंधन जैसा मन में आवे।
क्या रहना क्या जाना उनका उड़न पंछी कहलाये जी ।।३४७।।
यही शंका तो मेरे दिल में बार-बार आ जाय।
कहीं अचानक मुझे छोड़कर आप चलें नहीं जाय जी ।।३४८।।
योगी अपना काम अधूरा छोड़ कहीं नहीं जाय।
काम बने फिर रहे नहीं वे जोगिन यों दरसाय जी ।।३४९।।
निशंक रहिये राजन तुमको छोड़ अभी नहीं जाऊं।
यदि जाने की इच्छा हुई तो पहले तुम्हें वतलाऊं जी ।।३५०।।

वचन आपके शिरो धारकर जाऊं विवाह के काज।
निशंक रहिये नहीं जाऊं मैं बिना भेंट महाराज जी ॥३५१॥
मानतुंग नृप विवाह हेतु हो गज होदे असवार।
दुल्हा देखने नगर निवासी दौड़े सब नर नार जी ॥३५२॥
अलकापुरी सम नगर सजाया स्थान-स्थान पर द्वार।
छटा नगर की देख बराती प्रसन्न भए अपार जी ॥३५३॥
तोरण बांध लिया चंवरी में रत्नवती के संग।
मानतुंग का विवाह हो गया, खुशियां हृदय अभंग जी ॥३५४॥
रत्नवती वहां बैठी महल में कई संकल्प बनाय।
उधर भूप भी स्वप्न देख रहा मिलन समय कब आय जी ॥३५५॥
मानवती के मन में आया जोगिन वेश उतार।
महारानी का रूप बनाकर जाऊं महल मंझार जी ॥३५६॥
भ्रमरी सम बन करके सीधी आई महल के मांय।
रत्नवती लख मानवती को उच्चासन बैठाय जी ॥३५७॥
शिष्टाचार कर मानवती से परिचय लेना चावे।
कौन कहां से आप पधारे कृपा करी फरमावें जी ॥३५८॥
तव भर्ता ही मम भर्ता हैं यह मेरी पहचान।
मानवती है नाम मेरा मैं आई दिलाने ध्यान जी ॥३५९॥
बहन समझकर रत्नवती ने कीना अति सम्मान।
मुख को कर गंभीर मानवती कहूं सुनो धर ध्यान जी ॥३६०॥
अभी काम क्या मेरा यहां पर किंतु जरूरी बात।
कहनी है मुझको तुम आगे बुला लेवो निज मात जी ॥३६१॥
परिचय पाकर मानवती का माता गले लगाई।
पूछे बात क्या आप चलाकर उज्जैनी से आई जी ॥३६२॥
बोली यों आवश्यक काम में भूल नहीं हो जाय।
माता आतुर होकर बोली जल्दी दो बतलाय जी ॥३६३॥
हे माताजी परम्परा यह कुल देवी पूजाय।
इसके पहले पति सेज पर पत्नी जावे नाय जी ॥३६४॥
यदि भूल कर सेज चढे तो कई अनर्थ हो जाय।
इसीलिए चेताने आई, भूल नहीं हो जाय जी ॥३६५॥
इन कामों में भूपति गण तो कर दें लापरवाही।
कामातुर नहीं सोचे कुछ भी करते मन की चाही जी ॥३६६॥
कहने का था ढंग निराला झट मन में जम जाय।
कौन है ऐसा देवी देव को नाराज करना चाय जी ॥३६७॥

बिना कहे नारी जाति में गहरा भूत सवार।
माता पुत्री सुनकर इस पर करने लगी विचार जी ॥३६८॥
इकलौती पुत्री के पति पर देवी कोप हो जाय।
ऐसा सहन करे नहीं माता गहरी चिंता छाय जी ॥३६९॥
मानवती कहे क्या सोचें हम कुल देवी यहां नाय।
वह तो रह गई उज्जैनी में नहीं समझ में आय जी ॥३७०॥
रत्नवती ने मन में धारे सभी स्वप्न मिट जाय।
सुहाग रात की सभी उमंगें मन में ही रह जाय जी ॥३७१॥
मां पुत्री के मानस को लख मानवती दरसाय।
मेरी बात में शंका हो तो पूछो मालव राय जी ॥३७२॥
रानी बोली शंका नहीं है हमको पूर्ण विश्वास।
याद दिलावे कौन देवी की जाकर नृप के पास जी ॥३७३॥
नारी के दिल में रहता है कुशल रहे पति राय।
पति कुशलता रत्नवती के मन में भावना आय जी ॥३७४॥
बोली मां से रत्नवती यों मेरे मन में आय।
यदि करो तो अभी आपको दूं मन की बतलाय जी ॥३७५॥
मां कहती है बेटी तेरे जीवन भर की बात।
मानूंगी क्यों नहीं तेरी मैं कह दो अवदात जी ॥३७६॥
बड़ी बहन यह मानवती है लेंगे इनकी मान।
बुरा न माने राजन ऐसे दिलवा देगी ध्यान जी ॥३७७॥
पुत्री की सुन बात मात के ठीक जंचा यह काम।
प्रसन्न होकर मानवती से कह दी बात तमाम जी ॥३७८॥
कैसे जा सकती हूं वहां पर करलो जरा विचार।
क्या बाधा है पति सामने जा सकती है नार जी ॥३७९॥
आज्ञा बिन आई हूं यहां पर कहती यों तत्काल।
यदि जाऊं तो लखकर मुझको क्रोधित हो भूपाल जी ॥३८०॥
रत्नवती कहे पति कोप तो होता है वरदान।
तेरे मेरे मालव पति की रक्षा पर दो ध्यान जी ॥३८१॥
यदि हो कुछ भी मालवपति को अपना क्या हो हाल।
अतः लगावो ऐसी युक्ति देवो विपत्ति टाल जी ॥३८२॥
माता बोली सोच रही क्या करो काम तत्काल।
नारी का जीवन पति संग ही रहता है खुश हाल ॥३८३॥
मुख मुद्रा गंभीर बना कहे आई दिलाने ध्यान।
यदि आपकी ऐसी भावना करूं बात परमाण जी ॥३८४॥

मानतुंग नृप बैठा कक्ष में कर रहा है इन्तजार ।
पहर रात गई कोई न आया मन में किया विचार जी ।।३८५।।

रत्नवती भी नहीं आई अरु नहीं संदेशा आय ।
क्या कारण है इतने में ही झंकार कर्ण में पाय जी ।।३८६।।

तभी द्वार पर एक सुन्दरी थाल हाथ के मांय ।
बोली आज्ञा हो तो अन्दर आ जाऊं महाराय जी ।।३८७।।

आइये आइये सहसा ऐसे शब्द कहे भूपाल ।
अन्दर आकर खड़ी रह गई कीना भूप सवाल जी ।।३८८।।

आप कौन हैं उत्कण्ठा से नृप ने पूछी बात ।
रत्नवती की गुरुणी हूं मैं नृप चेरी साक्षात् जी ।।३८९।।

स्वागत है बैठो आसन पर शिष्टाचार दिखलाय ।
वह बोली यह थाल हाथ से ले लीजे महाराय जी ।।३९०।।

राजा नार को लगा देखने भरा रूप भण्डार ।
वह बोली क्या देख रहे हैं लेवें थाल संभार जी ।।३९१।।

नृप कहे इसको नीचे रखो बोली अपवित्र हो जाय ।
कुल देवी का प्रसाद लाई है यह आपके तांय जी ।।३९२।।

जो भी राजकुमारी परणे उनको यही खिलावें ।
गुरुणी का यह झूंठा खाना अभी आप खा जावें जी ।।३९३।।

नहीं खाने से कुल देवी भी रुष्ट क्रुद्ध हो जाय ।
अतः आपको खाना है यह अनिष्ट नहीं हो पाय जी ।।३९४।।

झूंठा प्रसाद खा लिया भूप ने फिर आगे यों पूछे ।
और यहां के क्या रिवाज हैं आप कहें तो सूझे जी ।।३९५।।

छः महीने के बाद यहां पर गुरु गोत्र पूजाय ।
उतने समय तक रहना होगा गुरुणी रही दरसाय जी ।।३९६।।

इसके पहले वर से वधु का मिलन नहीं हो पाय ।
नृप बोला क्या रत्नवती छः महीने तक नहीं आय जी ।।३९७।।

सस्मित मानवती यों बोली यहां के ये हैं रिवाज ।
यह अवधि तो लम्बी होगी बिगड़े वहु काज जी ।।३९८।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'मोहन' मुनि कहे जो कामी नर नार ।
किसके आगे क्या कहना है देते सभी बिसार जी ।।३९९।।

मोह मुग्ध हो मानतुंग ने अपनी बात सुनाई ।
वह नहीं आवे तब तक उनकी पूर्ति दो करवाई जी ।।४००।।

नृप ने आग्रह करके लीनी मानवती को मनाय ।
चंद दिनों में मानवती वहां गर्भवती हो जाय जी ।।४०१।।

अश्रु धार बरस रही थी बोली नृप के आगे।
क्या होगा अब मेरे संग में अपयश का भय लागे जी ।।४०२।।
राजा बोला मत घबरावो उज्जैनी आ जावो।
रख लूंगा मैं अन्त:पुर में गहरी मौज मनावो जी ।।४०३।।
पहचानोगे नहीं मुझे वहां आप बड़े महाराज।
शंका छोड़ो और निशानी मैं देता हूं आज जी ।।४०४।।
नामांकित मुद्रिका दीनी अरु निज मुक्ताहार।
ये दोनों तुम रक्खो पास में मेरा है उपहार जी ।।४०५।।
प्रसन्न होकर मानवती ने कर लीना स्वीकार।
लेकर विदा बाग में आई तज दीना शृंगार जी ।।४०६।।
सब चीजें वीणा में रखकर जोगिन भेष बनाय।
होकर त्वरित रवाना वहां से उज्जैनी में आय जी ।।४०७।।
माता पिता के चरणों मांहि दीना शीश झुकाय।
बीतक सारी घटना उनको दीनी है दरसाय जी ।।४०८।।
पुत्री की सब घटना सुनकर पिता कहे शाबास।
बुद्धिबल से सभी प्रतिज्ञा पूरण करली खास जी ।।४०९।।
कुछ दिन रह कर पितृगृह में बंदीगृह में आई।
उसी तरह ही इष्ट जाप कर दीना दिवस बिताई जी ।।४१०।।
मानतुंग नृप मानवती का कर रहा है इन्तजार।
रानी अरु रत्नावती दोनों रही पंथ निहार जी ।।४११।।
तीनों सोचे मानवती का कहीं पता नहीं पाय।
कैसे आयेगी उज्जैनी, बैठी मौज मनाय जी ।।४१२।।
मानवती ने दूजे ही दिन खोला महल का द्वार।
हंस-हंस करके बातें करती बुलाके पहरेदार जी ।।४१३।।
उसने पूछा इतने दिन तो नहीं खुला यह द्वार।
भाई काम में लगी हुई मैं कीना मौन स्वीकार जी ।।४१४।।
इससे प्राप्ति क्या होगी ? यह आप मुझे फरमावें।
बोली भाई यह साधना, जीवन उच्च बनावे जी ।।४१५।।
कुछ दिन बातें करते देखा मानवती का ढंग।
पहरेदार ने सोचा बढ़ रहा यह क्या उदर कलंक जी ।।४१६।।
क्या देख रहे मानवती कहे जाकर दो बतलाय।
पटराणी को दो खुश खबरी देऊं तुम्हें सुनाय जी ।।४१७।।
गर्भवती हो गई मानवती सुनकर पहरेदार।
घबराया मन मांहि गहरा क्या होगा करतार जी ।।४१८।।

सारा दोष किया है मैंने बोलेंगे नरनाथ।
कौन पुरुष यहां आवे जावे किसका इसमें हाथ जी ॥४१९॥
सहसा बोली कड़क मानवती बोला क्यों तू देर लगावे।
भारी पैर से हुआ रवाना सोचे कहा न जावे जी ॥४२०॥
ताने बाने बुनता वह अन्त:पुर में आय।
पटराणी लख पहरेदार को अपने पास बुलाय जी ॥४२१॥
रानीजी के हाल-चाल क्या पूछ रही पटरानी।
अन्त:पुर की सभी रानियां आई सुनने कहानी जी ॥४२२॥
घबरा करके पहरेदार ने यों सन्देश सुनाया।
गर्भवती हो गई रानी जी यही सुनाने आया जी ॥४२३॥
क्या बकते हो पटराणी ने दिया उसे फटकार।
जो मुझको फरमाई कह दी बोला पहरेदार जी ॥४२४॥
किस कारण से कहता है तू रहस्य कहो इस वार।
रहस्य को तो मैं क्या जानूं मैं हूं ताबेदार जी ॥४२५॥
सुनकर उसकी पटरानी ने वहां से विदा दिलाई।
जान बचाकर पहरेदार तो पुन: स्थान गया आई जी ॥४२६॥
एक रानी कहे मानवती तो चमत्कार दिखलाय।
कहे दूसरी पति बिना यह देव माया हो जाय जी ॥४२७॥
देवमाया वा पुरुष माया हों है दोनों में एक।
चौथी कहे यह कुल्टा नारी जिसको समझी नेक जी ॥४२८॥
ज्यादा बढ़ती देख बात को पटराणी दरसाय।
मानवती का न्याय करेंगे स्वयं यहां महाराय जी ॥४२९॥
अपना तो कर्त्तव्य यही है सूचित करें नरनाथ।
लिख वृतान्त सभी कागज में भेजा इनके साथ जी ॥४३०॥
दूत पत्र ले मुंगी पट्टण पहुंचा भूप आवास।
शीश झुकाकर पत्र दे दिया जाकर नृप के पास जी ॥४३१॥
पत्र देखकर नरपति के दिल छा गया क्रोध अपार।
दूत वहां से विदा किया अब भूपति करें विचार जी ॥४३२॥
यह कैसे हो सकता मानवती सगर्भा हो जाय।
मालूम होता शोकों के मन ईर्ष्या रही फैलाय जी ॥४३३॥
पटरानी के लिखा हाथ का नहीं संदेश लिगार।
यदि बात हो सत्य जगत में अपयश का नहीं पार जी ॥४३४॥
लोग कहेंगे राजरानी ने लीना पाप कमाय।
कुछ भी हो उज्जैनी जाकर कर दूं सारा न्याय जी ॥४३५॥

रत्नवती से विवाह हुए भी हो गये हैं छः मास।
आवेश सहित चाल आये हैं नृप दलथंभण के पास जी ।।४३६।।
लखकर आनन मानतुंग का नृप को हुआ विचार।
उच्चासन पर बैठाके पूछा क्या आज्ञा इस वार जी ।।४३७।।
मानतुंग कहे गोत्रज पूजा कब करनी फरमाय।
सुनकर दलथंभण यों बोला कोई पूजा नाथ जी ।।४३८।।
फिर क्यों रोका मुझको यहां पर हो गये हैं छः मास।
गोत्रज पूजा गुरुणी की सब बातें बताई खास जी ।।४३९।।
दलथंभण नृप कहे मैं समझा लग गया यहां पर मन।
अतः आपके रहने से मैं रहता सदा प्रसन्न जी ।।४४०।।
मानवती का नाम श्रवण कर सीधा महल में आय।
जवाई राज से सुनी सभी वह दीनी है सब दरसाय जी ।।४४१।।
धूर्ता नारी कौन मानवती वह मुझको बतलाय।
रानी कहे इन नृप की नारी उज्जैनी से आय जी ।।४४२।।
रत्नवती भी कहे पिता से माता सच दरसाय।
राजा बोला तब तो गई वह सबको मूर्ख बनाय जी ।।४४३।।
रानी बोली नाथ रुष्ट क्यों क्या कारण फरमाय।
बरस पड़े जंवाई मुझ पर सारा हाल सुनाय जी ।।४४४।।
होगा कोई कारण इसमें तज दें नाथ विचार।
पति पत्नि का परिहास यह सुन चौंका भूपाल जी ।।४४५।।
रानी कहे कैसे संभव हो पति न सके पहचान।
रही निरन्तर दो महिने तक सारी रात उन स्थान जी ।।४४६।।
सहसा नरपति मुख से निकला बुद्धिमती वह नार।
सबको पागल करके अपना लीना कारज सार जी ।।४४७।।
अब रुकने के नहीं जंवाई, जल्दी करो तैयारी।
जो-जो दहेज में चीजें देनी करो इकट्ठी सारी जी ।।४४८।।
हुक्म हुआ सैनिक गण राजी मिले सद्य परिवार।
नृप सोचे झट जाऊं उज्जैनी करूं बात निरधार जी ।।४४९।।
विदा करी है रत्नवती को मां पितु अश्रु डार।
राजा प्रजा सब पहुंचाने को गए नगर के बाहर जी ।।४५०।।
प्रेम सहित पहुंचा कर वापिस जा रहे निज आगार।
लगा भूप को आज महल है मानो शून्यागार जी ।।४५१।।
पुत्री विछोह से अभी भूप के रही उदासी छाय।
इतने में चंदेरी नृप का दूत वहां पर आय जी ।।४५२।।

जय विजय हो कही दूत फिर अपनी बात सुनाय।
चतुरंगिणी सेना ले मम स्वामी यहां रहे आय जी ॥४५३॥

दलथंभण नृप बोला ऐसे क्या कारण आने का।
बोला रत्नवती के संग में मन विवाह करने का जी ॥४५४॥

विवाह हो गया नरपति बोला वह ससुराल सिधाई।
कहे दूत मैं निज स्वामी को दूंगा बात सुनाई जी ॥४५५॥

दूत गया कर नमन भूप मन गहरी चिंता छाय।
क्योंकि जितशत्रु स्वभाव से महा हठीला राय जी ॥४५६॥

जाकर इतने निज स्वामी को दीनी बात सुनाय।
विवाह हो गया सुन के भूप का पारा गर्म हो जाय जी ॥४५७॥

जित शत्रु ले सुभट साथ में सीधा सभा में आय।
दलथंभण भयभीत हुआ पर ऊपर से मुस्काय जी ॥४५८॥

सिंहासन से खड़ा हुआ और आगे बढ़ दरसाय।
भले पधारे राजन आपका स्वागत है फरमाय जी ॥४५९॥
इन मीठे शब्दों से भूप को कुछ-कुछ शांति आई।
चंदेरी नृप कहे सत्य क्या दी रत्नवति परणाई जी ॥४६०॥
यह धोखा क्यों किया आपने बचन रहे पलटाय।
पुत्री हठ से झुक कर दीनी मैं उज्जैनी राय जी ॥४६१॥
यह बहाना व्यर्थ बनाकर मुझको रहे बहकाय।
भला आपका इसमें समझो दो रत्नवती संभलाय जी ॥४६२॥
विवाह हो गया कैसे उसको वापिस लाई जाय।
मुझे न सुनना इन बातों को जित शत्रु दरसाय जी ॥४६३॥
क्रोधित लख दलथंभण का दिल चिंता से भरपूर।
भावि अनिष्ट की आशंका से भूप उतर गया नूर जी ॥४६४॥
उसी क्षण जित शत्रु राय से प्रधान यों दरसाय।
समय दीजिए शायद कोई समाधान मिल जाय जी ॥४६५॥
समाधान नहीं प्रधान मुझको रत्नवती ही चाहे।
वर्षों पहले मुझको पुत्री अर्पित करी जतावे जी ॥४६६॥
समय मांगते यदि आप तो देता हूं दिन चार।
नहीं लाये तो युद्ध करन को हो जाना तैयार जी ॥४६७॥
यह कह करके जितशत्रु तो वहां से गया सिधाय।
निश्चय होगा युद्ध समझ गये यह टलने का नाय जी ॥४६८॥
सभी सभासद सोच रहे हैं गई बाई ससुराल।
विवाहिता को कैसे देवें मिथ्या कहे भूपाल जी ॥४६९॥

चिंतातुर नृप सिंहासन तज महलों में चल आये।
पीछे-पीछे प्रधान आ रहा नृप तो जान न पाए जी ॥४७०॥
आ प्रधान बोला चिंता से नहीं संकट टलने का।
बिना युद्ध मानेगा नहीं नृप ठान लिया लड़ने का जी ॥४७१॥
अवश्य होगा युद्ध सत्य है प्रधान यों दरसाय।
यदि युद्ध हो नरपति बोला सर्वनाश हो जाय जी ॥४७२॥
विवेक से यदि काम करें तो सर्वनाश रुक जावे।
कैसे करें ? प्रधान जी तुम कोई युक्ति बतलावे जी ॥४७३॥
यही बताने आया हूं मैं दूत उज्जैनी जाय।
मानतुंग नृप सेना लेकर अपने शहर आ जाय जी ॥४७४॥
उनके यहां आने से अपनी शक्ति भी बढ़ जाय।
जितशत्रु राजा भी देखकर उल्टे पांव दौड़ाय जी ॥४७५॥
जैसा सोचा बिल्कुल अच्छा किंतु करो विचार।
अभी गये हैं वापिस जल्दी आना है दुष्वार जी ॥४७६॥
आने में भी समय लगेगा हैं केवल दिन चार।
प्रधान बोला समय मांगले मीठे वचन उच्चार जी ॥४७७॥
मधुर शब्द से नहीं होने की हो जाती है बात।
उस जिद्दी अरु क्रोधी के तो अचूक शस्त्र विख्यात जी ॥४७८॥
राजा बोला दाव तुम्हारा संभव है लग जाय।
बैठे से कुछ करना अच्छा मंत्री रहा दरसाय जी ॥४७९॥
आज्ञा मिलते ही मंत्री ने लिया दूत बुलवाय।
बिठा दूत को मंत्रीश्वर ने दीनी बात समझाय ॥४८०॥
सुनकर दूत निवेदन करता बात समझ गया सारी।
काम बनाकर आऊं जल्दी जन्म भूमि मोहे प्यारी जी ॥४८१॥
सेनापति को भृत्य भेजकर सत्वर पास बुलाय।
सेना की क्या स्थिति कहिये मंत्री ने दरसाय जी ॥४८२॥
सेनापति कहे चंदेरी सेना अपने से कहीं अधिक है।
भेज गुप्तचर पता लगावो इसमें अपना हित है जी ॥४८३॥
जैसी आज्ञा कहकर वहां से सेनापति सिधाय।
नगर रक्षा हित बैठा मंत्री पंच परमेष्ठी ध्याय जी ॥४८४॥
मानतुंग नृप विदा हुए तब राह में वह उद्यान।
उसे देखते याद आ गया जोगिन का यह स्थान जी ॥४८५॥
कटक रोक कर रथ से उतरा खोज रहा वहां राय।
घूम-घूम कर चारों ओर ही वह आवाज लगाय जी ॥४८६॥

सारे प्रयास जब निष्फल हो गये भूपति नयन भराय।
देख दशा नृप की सब कहे विश्वास न उनका लाय जी ॥४८७॥

योगी जन तो मन के राजा पता न उनका पाय।
रम गई होगी यहां वहां कहीं रहे खूब समझाय जी ॥४८८॥

वचन दिया था भेंट बिना मैं नहीं जाऊंगी राय।
कभी झूठ बोले नहीं योगी अतः खोज करवाय जी ॥४८९॥

खोज हुई जोगिन की किंतु कैसे वहां मिल पाय।
समझा करके आगे बढ़े तो वापि दृष्टिगत थाय जी ॥४९०॥

देख बावड़ी वही अप्सरा उसे दिल दिमाग में लाय।
उसको भी ढुंढवाली वहां पर निराश हो गया राय जी ॥४९१॥

भारी दुःख हो रहा है मन में नहीं करने का काम।
कीना फिर भी नहीं हाथ में आई मेरे बाम जी ॥४९२॥

अपने दुःख को खुद ही जाने किसको वह बतलाय।
पानी बिन मछली की भांति तड़फ रहा मन मांय जी ॥४९३॥
प्याला प्रेम भरा था सन्मुख एक दम उलट जाय।
बूंद हाथ नहीं आई मेरे नसीब गया पलटाय जी ॥४९४॥
सरदारों ने बहुत कहा पर भूपति सुने न कान।
जमा बावड़ी पास में ऐसा जैसे हो चट्टान जी ॥४९५॥
उसी समय सेवक ने सूचना दीनी वहां पर आय।
दलथंभण का दूत नाथ के दर्शन करना चाय जी ॥४९६॥
अभिवादन करके यों बोला स्वामी याद फरमाय।
अभी आने का क्या कारण है कहदो भूप दरसाय जी ॥४९७॥
चंदेरी का नृप जितशत्रु सेना ले चढ़ आय।
रत्नवती मुझको परणावो कह गया सभा के मांय जी ॥४९८॥
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे दूत बड़ा विद्वान।
ऐसे ढंग से बात कह रहा सुने भूप धर ध्यान जी ॥४९९॥
होगा युद्ध वहां निश्चय राजन् इसमें संशय नांय।
समझाने पर नहीं समझा वह महाहठी है राय जी ॥५००॥
मुंगीपुर की रक्षा करना आप हाथ के मांय।
यह सुनते ही मानतुंग नृप झट आदेश सुनाय जी ॥५०१॥
चलो पुनः मुंगीपट्टण में विलम्ब नहीं हो जाय जी।
सरदारों ने नृप के सम्मुख ऐसी अरज सुनाय जी ॥५०२॥
रानी रत्नवती को वहां से उज्जैनी भिजवाय।
हम सब चलकर जितशत्रु से युद्ध मांहि भिड़ जांय जी ॥५०३॥

मानतुंग कहे क्या वह जबरन हमसे छीन ले जाय।
सभी कहे नहीं ले जा सकता पर है एक उपाय जी ॥५०४॥
जोगिन अरु अप्सरा दोनों नहीं रही दिखलाय।
समय सामने ऐसा ही है समझे मन में राय जी ॥५०५॥
रानी को उज्जैनी भेजकर करदी सेना लार।
फिर मुंगीपट्टण आ नृप से कीना युद्ध विचार जी ॥५०६॥
दोनों सेनाएं मिलने से बढ़ गई शक्ति अपार।
जितशत्रु को जाके गुप्तचर देता खबर हर बार जी ॥५०७॥
युद्ध टालने के खातिर एक दूत वहां भिजवाय।
जाकर जितशत्रु के पास में दे उनको समझाय जी ॥५०८॥
अभिवादन कर खड़ा सामने अपनी बात सुनाय।
छः महिने हो गये विवाह को कैसे वह दी जाय जी ॥५०९॥
चंदेरी नृप दूत बात सुन हो गया क्रोध में लाल।
वचन भंग कर मेरे सामने यह भेजा है हाल जी ॥५१०॥
मुझे पता है उज्जैनी नृप सेना साथ में लाया।
इसीलिए तो तुम स्वामी ने अपना होश बढ़ाया जी ॥५११॥
जाकर कह दो रणभूमि में स्वागत करने आय।
दूत नमन कर हुआ रवाना आकर सब दरसाय जी ॥५१२॥
क्रोधावेश में जितशत्रु नृप कह गया रण की बात।
किंतु ध्यान आते ही मन में मच गया उत्पात जी ॥५१३॥
मैं तो समझता दलथंभण से जय पालूंगा जाय।
अब इनकी सेना के आगे नगण्य सेन गिणाय जी ॥५१४॥
उज्जैनी नृप की शक्ति के सन्मुख मैं कुछ नाय।
चिंता सागर में डूबा है सोच रहा मन मांय जी ॥५१५॥
युद्ध होगा यों कह क्षत्री हो कैसे लौटकर जाऊं।
कह कर बदलूं तो मांहि कायर मैं कहलाऊं जी ॥५१६॥
रणभूमि में दोनों ओर की भिड़ गई सेना आय।
शूरवीर योद्धागण वहां पर शौर्य रहे दिखलाय जी ॥५१७॥
चंद समय में जितशत्रु की सेना गई घबराय।
उसे देख नृप जान बचा मैदान छोड़ भग जाय जी ॥५१८॥
राजा के जाते ही सेना दिये शस्त्र भू डाल।
युद्ध बंद होने की आज्ञा दे दीनी भूपाल जी ॥५१९॥
मानतुंग अरु दलथंभण नृप विजय घोष बजवाय।
दोनों को ही नगर निवासी बड़े ठाठ से लाय जी ॥५२०॥

वहां आकर नृप मानतुंग यों ससुर से दरसाय।
उज्जैनी जाने की आज्ञा अब मुझको फरमाय जी ।।५२१।।
ससुर कहे वर्षा होने से मार्ग बिगड़ गया भारी।
कृपा करो और यहीं बितावो ऋतु वर्षा की प्यारी जी ।।५२२।।
जाना जरूरी था किंतु जल चारों ओर भर जाय।
सारे मार्ग में कीचड़ हो गया गई मौसम पलटाय जी ।।५२३।।
सत्य बात समझ कर सोचे मानतुंग महाराय।
जाना संभव नहीं रुकने की दी मंजूरी फरमाय जी ।।५२४।।
गर्भस्थ जीव का मानवती अब पूरा रक्खे ध्यान।
किसी तरह की हानि नहीं हो रखती पूरा ज्ञान जी ।।५२५।।
कसाय से मन मोड़ लिया कहीं कुप्रभाव पड़ जाय।
सोना बैठना सभी काम अब करती ध्यान लगाय जी ।।५२६।।
आगम वाणी स्वयं पढ़े अरु गिने सदा नवकार।
सदा भावना उत्तम भावे रक्खे उच्च विचार जी ।।५२७।।
ऐसे समय बिताते उसका प्रसव काल आ जाय।
शुभ लक्षण संपन्न बाल को जन्म दिया सुखदाय जी ।५२८।।
पति सम मुखड़ा देख बाल का हो गई प्रसन्न अपार।
मुख समता से पति की स्मृति छा गई थी उस बार जी ।।५२९।।
प्रातःकाल होते ही कह दिया पहरेदार को आय।
पटरानी को दे दो सूचना पुत्र जन्म की जाय जी ।।५३०।।
पहरेदार से सुनके सूचना सभी सन्न हो जांय।
पटरानी सोचे यों दिल में दे दूं सूचना राय जी ।।५३१।।
कुलक्षणी मानवती को देंगे दण्ड नृप भारी।
नहीं मानेंगे अपना पुत्र वो देंगे सीम निकारी जी ।।५३२।।
नगर जनों के सन्मुख होगा खूब अपमान।
कभी माफ नहीं कर सकते ऐसा काम राजान जी ।।५३३।।
यही सोच कर पटरानी ने दिया पत्र लिखवाय।
आप विना ही मानवती ने पुत्र लिया है पाय जी ।।५३४।।
चमत्कार युत इस घटना से होंगे आप प्रसन्न।
इस कारण से हमें आपके दर्शन हों आसन्न जी ।।५३५।।
और अनेकों बातें लिखकर दिया दूत के हाथ।
अच्छी तरह से समझा उसको भेजा जहां नर नाथ जी ।।५२६।।
दूत नमन कर चला वहां से मुंगी पट्टण आय।
मार्ग भरा जल कीचड़ से वह मुश्किल से वहां जाय जी ।।५३७।।

नृप को करके नमन दूत ने पत्र दिया नृप हाथ।
पढ़ा पत्र अरु सन्न हो गये क्या यह है सच बात जी ।।५३८।।
मेरे बैठे मेरे राज्य में हो रहा है अन्याय।
मेरी रानी मेरे बिन ही पुत्र जन्म रही पाय जी ।।५३९।।
उसी क्षण कर दिया रवाना दूत उज्जैनी आय।
भूप वहां से ससुर पास आ अपनी बात सुनाय जी ।।५४०।।
अब जाने की आज्ञा मुझको सत्वर दे बक्षाय।
देख भूप के मनोभाव को ससुर आज्ञा फरमाय जी ।।५४१।।
त्वरित वहां से हुए रवाना मार्ग वही आ जाय।
जोगिन अरु अप्सरा दोनों रही स्मृति में छाय ।।५४२।।
आगे बढ़ते मानवती का स्मरण मन में आय।
रत्नवती की गुरुणी बनकर प्रेम गई दिखलाय जी ।।५४३।।
बड़ी धूर्त थी कर गई धोखा पुनः लौट नहीं आई।
करके मैं विश्वास नार का फंसा जाल के मांही जी ।।५४४।।
इसी नाम की मानवती एक स्तम्भ महल के मांय।
विना पुरुष के पुत्र जन्म दे कमाल कर दिखलाय जी ।।५४५।।
विचार करते-करते भूप का मस्तक गया चकराय।
तज कर सारे झंझट मन में वन छवि लख सुख पाय जी ।।५४६।।
मार्ग समाप्त होते ही भूप को उज्जैनी दिखलाय।
गगन चुम्बी महलों को लख कर अभिमान छा जाय जी ।।५४७।।
रथ द्वार पर रुका संतरी सारे शीश झुकाय।
अन्तःपुर सब पति स्वागत को सन्मुख गया है आय जी ।।५४८।।
सबसे मिलकर रत्नवती के भूप महल में जाय।
अहो भाग्य निज समझ पति के चरणों शीश झुकाय जी ।।५४९।।
उच्चासन बैठाकर पति को स्वयं खड़ी हो जाय।
ऐसी आशा नहीं थी तुम से भूप सद्य दरसाय जी ।।५५०।।
सुनकर चौंकी रत्नवती वहां प्रथम मिलन के मांय।
उपालंभ यह कैसा मुझको पतिदेव फरमाय जी ।।५५१।।
मैं नहीं समझी नाथ बात को क्या दीना फरमाय।
कैसे समझोगी तुम मेरी सोचो भूप दरसाय जी ।।५५२।।
वह साजिश थी सभी तुम्हारी छः महीने रुकवाया।
गुरुणी अपनी भेज मुझे सब उनसे ही कहलाया जी ।।५५३।।
उसका नाम था मानवती वह उसी रात ही आय।
याद आ गई रत्नवती को मुस्का कर दरसाय जी ।।५५४।।

अब समझी मैं वह तो आपकी थी पहले की नार।
मिथ्या दोष दें मुझे आप तो रम गये उसकी लार जी ।।५५५।।
मेरी कैसे पत्नी है वह स्पष्ट कहो अवदात।
इतने दिन रही आप महल में स्वयं समझ लें बात जी ।।५५६।।
सच कहता हूं नहीं जानता मैंने गुरुणी मानी।
अतः साफ कहूं पूरी हकीकत लेऊं उसको जानी जी ।।५५७।।
पति आग्रह लेख रत्नवती ने सभी बात दरसाई।
वह बोली हूं मानवती मैं उज्जैनी से आई जी ।।५५८।।
बिना किए देवी पूजन के पति नार मिले नांही।
अनिष्ट नहीं हो जावे कोई, यह चेताने आई जी ।।५५९।।
इस शंका से कांप गये हम क्या होगा इस बार!
कौन जाय समझावे अतः भेजी तुम द्वार जी ।।५६०।।
जितनी बातें हुई उन्हीं से दीनी सब दरसाय।
आप पास में भेजी हमने आगे खबर कुछ नाय जी ।।५६१।।
अब आगे की आप बतावें क्या उसने बतलाई।
भूप कहे कंवरी की गुरुणी अपने को दरसाई जी ।।५६२।।
मेरा नाम है मानवती मैं देने सूचना आई।
गोत्रज पूजा होती तब तक रहना आपको यांहि जी ।।५६३।।
छः महिने के बाद आप से मिले रत्नवती आय।
तुमने भेजी यही समझ विश्वास मुझे आ जाय जी ।।५६४।।
पूर्ण किया विश्वास आपने रखी महल के मांय।
नहीं होता विश्वास आपको देते सद्य कढ़ाय जी ।।५६५।।
मानतुंग नृप समझ मन में चोरी पकड़ में आई।
उसी क्षण दी बदल बात को पूछूं दो बतलाई जी ।।५६६।।
मानवती के पुत्र हुआ है क्या? कहो सांच बतलाओ।
बोली बात सत्य है राजन! संशय तनिक न लाओ जी ।।५६७।।
भूप कहे उसकी बदनामी कभी कान में आई।
रत्नवती कहे एक बात भी मैं तो नहीं सुन पाई जी ।।५६८।।
रहस्य कैसा है यह, किसका पुत्र कहलाय।
तत्क्षण बोली पुत्र आपका इसमें शंका नाय जी ।।५६९।।
भूप कहे मैं इतने दिन था मुंगी पट्टण मांय।
रत्नवती कहे दस माह पहले तव सम्पर्क में आय जी ।।५७०।।
वह तो रहती सदैव बंदी कैसे वहां गई आय।
तज दो शंका सती मानवती, इसमें संशय नांय जी ।।५७१।।

मैं तो आप से अर्ज करूं महलों में उनको लावें।
सदाचारिणी ऐसी नारी ढूंढे से नहीं पावे जी ।।५७२।।

भूप कहे तुम नहीं जानती छा गया उस पर मान।
अपने बुद्धिबल से करती मेरा भी अपमान जी ।।५७३।।

वह तो अपने पति को रखना चाहे दास समान।
उसको कैसे सती समझे सोचो कर अवधान जी ।।५७४।।

सारी पोल खोल दूं उसकी कल मैं वहां पर जाकर।
जैसा उचित हो वैसा करलें रत्नवती तव चाकर जी ।।५७५।।

चिंता करते-करते सारी नृप ने रात बिताई।
रत्नवती क्या मिल गई नहीं समझ में आई जी ।।५७६।।

रत्नवती थी अपने शहर में यह बन्दी गृह मांय।
आपस में कैसे मिल सकती सोच रहा है राय जी ।।५७७।।

वहां पर भी आई थी ऐसी मानवती एक नार।
एक नाम के इस जगति में केई नर नार जी ।।५७८।।
अन्य रानियों का भी ऐसा व्यंग रहा दिखलाय।
सबके मुख पर हंसी छा रही नहीं समझ में आय जी ।।५७९।।
रहस्य है निश्चित ही इसमें नहीं समझ में आवे।
चिंता जाल में उलझा राजन् निशा बीतती जावे जी ।।५८०।।
नित्य नियम से निपट भूपति आसन बैठा आय।
द्वारपाल को भेज त्वरित ही प्रधान को बुलवाय जी ।।५८१।।
हाथ जोड़ कर प्रधान पूछे क्या हुक्म फरमाओ।
हल्ला क्या है मानवती का साफ-साफ बतलावो जी ।।५८२।।
आपस में दोनों की वार्ता चली बहुत ही देर।
किन्तु नहीं पहुंचे निर्णय पर क्या है इसमें फेर जी ।।५८३।।
छोड़ो सारी बातें अब मैं स्वयं करूंगा न्याय।
ऐसा कह नृप हुए रवाना स्तंभ महल में आय जी ।।५८४।।
मुदितमना हो मानवती जी कर रही पुत्र को प्यार।
शिशु की हलन क्रिया को लखकर मां भी प्रसन्न अपार जी ।।५८५।।
ज्यों ही रथ से उतरे राजन खुले महल के द्वार।
पति को लख जान गई वह छाया क्रोध अपार जी ।।५८६।।
करके नमन मानवती वहां पर खड़ी रही एक ओर।
बालक को लख नृप के दिल में बढ़ा घृणा का जोर जी ।।५८७।।
मानतुंग नृप सोच रहा था करेगी पश्चाताप।
चरण में गिर क्षमा मांगकर कहेगी अपना पाप जी ।।५८८।।

सोचा वैसे नहीं हुआ तब क्रोध गगन छा जाय।
झल्ला करके बोला राजा, यह किसका बतलाय जी ।।५८९।।
मेरे पति का पुत्र मानवती सहज भाव दरसाय।
ऐसा उत्तर सुना भूप का क्रोध दिया भड़काय जी ।।५९०।।
साफ कहो क्यों अंट-संट बक मिथ्या रही सुनाय।
मानवती कहे स्पष्ट कह रही झूंठ रती भर नाय जी ।।५९१।।
जिनसे मेरा विवाह हुआ है वही पति है मेरा।
उसी पति का पुत्र सामने कह रही चमके चेहरा जी ।।५९२।।
उत्तर सुनकर सहज भूप को क्रोध वहां आ जाय।
स्वभाव जान रहा मानवती का सहज नहीं झुक पाय जी ।।५९३।।
शांत स्वर में नृप ने पूछा कौन पुरुष यहां आय।
दो वक्त ही आप पधारे इस भवन के मांय जी ।।५९४।।
अन्य पुरुष के लिए पूछ रहा कहे कोई नहीं आय।
तब कैसे यह हुआ बता दे सम्पर्क आपका पाय जी ।।५९५।।
तेरे पाप की चर्चा हो रही सब उज्जैनी मांय।
अतः बता दे नाम पुरुष का भूप रहा फरमाय जी ।।५९६।।
उसी पुरुष के साथ तुझे दूं अन्य देश पहुंचाय।
पाप तुम्हारा छिप जावेगा अपयश भी मिट जाय ।।५९७।।
अपयश और निंदा की मुझको चिंता कुछ भी नाय।
मेरे पति और पुत्र पास में बैठे भय क्यों आय जी ।।५९८।।
प्राज्ञ 'प्रसादे' 'सोहन' मुनि कहे सति को डर कुछ नांही।
निशंक होकर रहे मानवती भूप क्रोध के मांही जी ।।५९९।।
तुम जैसी मैंने नहीं देखी कुलटा धृष्टा नार।
बता रही हो पिता पुत्र का मुझको तुम वेकार जी ।।६००।।
आप सरीखे पुरुष जगत में मुझे नजर नहीं आवे।
सती नार और अपने पुत्र पर शंका मन में लावे जी ।।६०१।।
सती नाम सुन मानतुंग का क्रोधावेग बढ़ जाय।
बोला अवध्य होती नारी वरना दूं मरवाय जी ।।६०२।।
अच्छा होता प्राण दण्ड यदि आप मुझे बक्षाते।
निज चरित्र की हानि कान से आप नहीं सुन पाते जी ।।६०३।।
इन शब्दों से नृप के क्रोध की सीमा पार हो जाय।
पलंग के आ ठोकर मारी पड़ा दूर वह जाय जी ।।६०४।।
पलंग के हटते ही राजा सुरंग वहां पर पावे।
बोला मानवती यही तुम्हारे चरित्र को बतलाये जी ।।६०५।।

तुम तो समझो सदा रहूंगी पाक पाप छिप जाय।
किंतु तुम्हारी करतूत साफ-साफ दिखलाय जी ।।६०६।।
इतना होने पर भी मानवती दिल में नहीं घबराय।
नाप तोल कर रहा है राजा, स्थिर भाव ही पाय जी ।।६०७।।
स्वयं सुरंग का पता लगाऊं, कहां खुलता है द्वार।
ऐसे कहकर उतर गया नृप वहां सुरंग मंझार जी ।।६०८।।
भूमि पर टिकते ही पैर वहां वीणा नजर में आई।
उठा हाथ में देखे उसको इधर-उधर पलटाई जी ।।६०९।।
अंधेरे में नृप को कुछ भी साफ नहीं दिखलाय।
प्रकाश में ला दबा जोर से वीणा मुख खुल जाय जी ।।६१०।।
जोगिन अप्सरा मानवती गुरुणी के वस्त्र गिर जाय।
देख सभी परिधान भूप के आश्चर्य मन में आय जी ।।६११।।
मन: स्थिति लख वहां राजा की मानवती मुस्काय।
चुपके से उठ दोनों चीजें रखदी सन्मुख लाय जी ।।६१२।।
निज नामांकित लखी मुद्रिका अरु वह मुक्ताहार।
दृष्टि उन पर पड़ते ही नृप कीना हृदय विचार जी ।।६१३।।
मानवती गुरुणी की तुलना कर रहा अब भूपाल।
वही रंग वही रूप फर्क नहीं वही बोल वही चाल जी ।।६१४।।
सहसा निकल गया नृप मुख से क्या वहां पर तुम आई।
जोगिन अप्सरा गुरुणी बन मैं आई पास के मांहि जी ।।६१५।।
आश्चर्य मांहि डूब गया नृप नहीं सका पहचान।
इतने दिन वह रही पास में बन गया मैं अनजान जी ।।६१६।।
विविध रूप धारण कर आई मिली अनेकों वार।
मानवती बतलाकर मुझ पर शासन किया हर बार जी ।।६१७।।
कमाल कर दिया अप्सरा बन के करा लिया सब काम।
पशु भी नहीं कर सकता है वैसे करवा लिया तमाम जी ।।६१८।।
बुद्धिमती है कितनी नारी मैं हूं मूर्ख महान।
मानवती से निज को बौना, भूप वहां रहा है मान जी ।।६१९।।
चाहे गालना दर्प अन्य का स्वयं का गल जाय।
गर्व से उन्नत जो मुख नृप का लज्जा से झुक जाय जी ।।६२०।।
पति मुख लखकर मानवती वहां चरणों में गिर जाय जी।
अश्रु भरे नयनों से अपने भाव रही दरसाय जी ।।६२१।।
विवश होकर नाथ मुझे यह करने पड़े सब काम।
मेरी आतमा रोई कितनी आप करें अनुमान जी ।।६२२।।

जितने प्रपंच किये थे मैंने पति पाने के काज।
मेरी मनोदशा समझ लें सभी आप महाराज जी ॥६२३॥
कहते-कहते मानवती के बहती अश्रु धार।
मानवती के अश्रु लखकर नृप के बहे हजार जी ॥६२४॥
दोनों का मन मैल निकल गया हो गया है इक रंग।
खुशियां इतनी छा गई तन में मन में भरा उमंग जी ॥६२५॥
बेटे को अब ले गोदी में राजा खुशी मनावे।
ऐसा लखकर मात हृदय भी फूला नहीं समाये जी ॥६२६॥
सचमुच ही तुम बुद्धिमती हो नृप ने किया बयान।
असंभव को संभव कीना तुम हो देवी महान जी ॥६२७॥
जितने कार्य किये हैं मैंने मम पितु का उपकार।
कैसे बने सहयोगी तेरे कहो बात सब सार जी ॥६२८॥
खुदवाई सुरंग पिता ने सीधी पीहर घर जाय।
जोगिन का वहां वेश वनाकर फिरती नगरी मांय जी ॥६२९॥
सभा से लेकर यहां तलक की सारी बात सुनावे।
राजा बोले तेरी कला का पार कहाँ हम पावे जी ॥६३०॥
कुछ समय वहां दम्पति शिशु का करते रहे दुलार।
फिर सुख दु.ख की बातें करके जाने लगें सरकार जी ॥६३१॥
जाते समय नृप कहे शीघ्र ही लूंगा तुम्हें बुलाय।
शीश झुकाकर मानवती कहे विश्वास पूरा मन मांय जी ॥६३२॥
पहरेदार ने देखा नृप का चेहरा रहा मुस्काय।
मानवती अरु मेरी खैर नहीं वह शका मिट जाय जी ॥६३३॥
राजा राज सभा में आकर ऐसा हुक्म सुनावे।
अमरापुरी सम उज्जैनी को आज शीघ्र सजावे जी ॥६३४॥
पट्ट हस्ती को सद्य सजाकर मेरे सन्मुख लावें।
सभी सभासद खुशी मनावें नृप आज्ञा फरमावें जी ॥६३५॥
प्रसन्न मुद्रा लख नरपति की प्रधान मन में आया।
क्रोधावेश में सुबह भूपति अभी प्रसन्न दिखलाया जी ॥६३६॥
एकान्त में कर जोड़ भूप से प्रधान यों दरसाय।
परिवर्तन यह सुबह शाम में क्या कारण फरमाय जी ॥६३७॥
मानवती के पुत्र हुआ वह मेरी ही सन्तान।
उसी वात की खुशी है मन में सत्य कहूं प्रधान जी ॥६३८॥
विस्मित हो मंत्री ने पूछा कैसे आप फरमावें।
गहराई में नहीं जावें वस इतनी ही दरसावे जी ॥६३९॥

कभी जीत से खुशी हार में राजा ऐसे बोले।
ज्यादा बातें नहीं बताता इतने में ही समझलें जी ॥६४०॥
अक्लमंद के लिए इशारा प्रधान गया सब जान।
मानवती की जीत हुई है छाई मुख मुस्कान जी ॥६४१॥
प्रधान से कहे धनमित्र सेठ को जल्दी यहां बुलवावो।
कोषाध्यक्ष से कहें खजाना मुक्त हाथ लुटवाओ जी ॥६४२॥
याचक जन कोई भी आवे खाली हाथ नहीं जाय।
दास दासी अरु कर्मचारी भी वांछित वस्तु पाय जी ॥६४३॥
दान पुण्य की केई योजना भूप रहा दरसाय।
स्थान-स्थान पर दान शालाएं दीनी हैं खुलवाय जी ॥६४४॥
मानवती का युग-युग तक यहां नाम अमर हो जाय।
शील धर्म अरु बुद्धिबल की गाथाएं सब गायें जी ॥६४५॥
उसी क्षण महावत ने अर्ज की गज ले आया बाहर।
प्रसन्न मन से हुआ रवाना गज हौदे पर चढ़कर जी ॥६४६॥
राज आज्ञा से गई दासियां मानवती के पास।
सोलह ही शृंगार सजाकर कीनी शचि सम खास जी ॥६४७॥
स्वयं भूपति मानवती को गज हौदे बैठाय।
बैठ पास में मानतुंग नृप लावे नगर के मांय जी ॥६४८॥
नगर निवासी पुष्प वृष्टि कर जय-जय शब्द सुनावें।
चारण भाट विरुदावली बोलें जन-जन मन हरसावे जी ॥६४९॥
बादित्र बज रहे चारों ओर ही हो रहा मंगलाचार।
मंद गति से चलते-चलते पहुंचे राज्य के द्वार जी ॥६५०॥
खूब दिलाया दान भूप ने याचक हुए निहाल।
दास दासी अरु कर्मचारी गण हो गये मालों माल जी ॥६५१॥
पहरेदार गौतम समुद्र को दीनी खूब दीनारें।
मंगल उत्सव मना वहां पर भूपति महल पधारे जी ॥६५२॥
इतना होने पर भी मन में नहीं मानवती गर्वाय।
कर्म शुभाशुभ आते जाते ऐसे मन में लाय जी ॥६५३॥
मानवती कर पति का स्वागत उच्चासन बैठाय॥
पति चरणों में बैठी आकर भूपति यों दरसाय जी ॥६५४॥
नहीं नहीं तुम तो ऊपर बैठो कीना काम कमाल।
बोली मैं तो दासी नाथ की चरणों मांहि निहाल जी ॥६५५॥
जोगिन अप्सरा बन करके तो सारा काम बनाया।
वह तो राजहठ नारी हठ की टक्कर थी महाराया जी ॥६५६॥

ऐसे हंसी खुशी के मांहि आनन्द से दिन जांय।
एक दिन सेठ धन मित्र सामने भूपति यों दरसाय जी ॥६५७॥

ऊँचा ज्ञान पुत्री को देकर तुमने चतुर बनाई।
लखकर इसका साहस मेरी अकल गई चकराई जी ॥६५८॥

सेठ कहे है जैन धर्म का ज्ञान समुद्र अथाग।
उसमें से हम केवल लेते अनन्तवाँ ही भाग जी ॥६५९॥

चमत्कारी है धर्म आपका नरपति यों दरसाय।
यह धर्म तो है वीरों का महिमा कही न जाय जी ॥६६०॥

अच्छी तरह से सेठ भूप को धर्म मर्म समझाय।
इसका पालन करके मानव उत्तम गति को पाय जी ॥६६१॥

करके वार्ता धर्म ध्यान की गया सेठ निज स्थान।
सुनकर सारी बात धर्म की नृप को हुआ है ध्यान जी ॥६६२॥

मानवती के स्नेह बंधा नृप सदा वहीं पर आय।
ऐसा हाल लख अन्य रानियें ईर्ष्या मन में लाय जी ॥६६३॥

मानवती ने जान हाल सब पति से अर्ज सुनाई।
अन्य रानियां नाथ कांक्षा कर रहीं हैं मन मांहि जी ॥६६४॥

सुनकर सारी बात भूप को मान हुआ उस वार।
भूल गया कर्त्तव्य मैं अपना उचित करूं सत्कार जी ॥६६५॥

अन्य साथ में रहे भूप पर मानवती पर ध्यान।
जल क्रीड़ा वन मांहि रखे साथ हर स्थान जी ॥६६६॥

लोग देखकर कहे मानवती जैसा पाया दुःख।
उससे भी ज्यादा पा रही है आज देखलो सुख जी ॥६६७॥

नाम पुत्र का रक्खा दम्पति बुद्धिदत्त उस वार।
अनुक्रम से वृद्धि को पा रहा सुख से राजकुमार जी ॥६६८॥

आठ वर्ष का हो जाने पर भेजा शाला मांय।
सभी कला में निपुण हो गया चंद दिनों के मांय जी ॥६६९॥

अध्यापक ने लाके कंवर को दीना है संभलाय।
खुश होकर नृप भी उसको गहरा धन दिलवाया जी ॥६७०॥

राज काज में राजकंवर अब सहयोगी बन जाय।
योग्य देखकर नृप ने अपना काम दिया संभलाय जी ॥६७१॥

पुत्र योग्य लख मानवती के दिल में हर्ष अपार।
पूर्व पुण्य से योग मिला है मुझे सभी इस बार जी ॥६७२॥

प्रधान आकर एक दिवस नरपति से दरसाये।
एक काम अवशेष रह गया उसे आप करवावें जी ॥६७३॥

सुनकर चौंका राजा मन में क्या करना अवशेष।
स्पष्ट कहो मैं नहीं समझता, क्या रहा काम विशेष जी ॥६७४॥

प्रधान बोला योग्य हो गये सबमें राजकुमार।
अतः योग्य कन्या से इनका विवाह करें सुखकार जी ॥६७५॥

ठीक समय चेताया मुझको करना काम जरूरी।
सुन्दर सुशीला कन्या लखकर इच्छा करनी पूरी जी ॥६७६॥

करी खोज मिल गई यथावत सुन्दर राजकुमारी।
विवाह कार्य हो गया कंवर का फली कामना सारी जी ॥६७७॥

मुक्त हो गये सभी काम से भूप और महारानी।
राजकाज को कंवर संभाले भूप रखे निगरानी जी ॥६७८॥

सभी तरह से सुख आने पर मद मन में छा जाय।
किंतु मानवती समझे धर्म से जीवन आनन्द पाय जी ॥६७९॥

संवर सामायिक करते नित्य जपे जाप नवकार।
सभी प्रताप धर्म का माने रक्खे शुद्ध विचार जी ॥६८०॥

सदा मुक्त हाथ से करती अभय सुपातर दान।
द्वार आया खाली नहीं जावे रखती पूरा ध्यान जी ॥६८१॥

इन सद्गुणों से मानवती का हो रहा गुणगान।
सारे देश मालव के मांहि जन-जन करें बखान जी ॥६८२॥

आमोद-प्रमोद अरु रंग राग में कितना समय बिताय।
उसका उनको पता लगे नहीं जीवन रहा है जाय जी ॥६८३॥

एक दिन वहां पर प्रबल पुण्य से धर्म घोष मुनिराय।
शिष्य मंडली सहित पधारे उज्जैनी के मांय जी ॥६८४॥

सुनी वार्ता नगर निवासी वंदन करने जाय।
मानवती लख जनता सोचे कहां रहें हैं जाय जी ॥६८५॥

द्वारपाल से पूछा कारण उसने दिया बताय।
आचार्य देव के दर्शन करने जनता रही है जाय जी ॥६८६॥

सुनकर अर्ज करी नरपति से गुरुदेव यहां आय।
दर्शन करने वाणी सुनने जाऊं यह चित्त चाय जी ॥६८७॥

राजा बोला जाओ अकेली मुझे नहीं ले जाय।
बोली दर्शन से दारिद्र जावे अवश्य पधारो राय जी ॥६८८॥

सब अन्तःपुर लिया साथ में गुरुदर्शन को जाय।
विधिवत वंदन करके बैठे भरी सभा के मांय जी ॥६८९॥

लखकर परिषद् सन्मुख गुरुवर जिनवाणी फरमावें।
कठिन कठिनतर नर भव पाकर इसको सफल बनावे जी ॥६९०॥

ऐसा अवसर इस आतम को मिले न बारम्बार।
सत्वर धर्म साधना करके लेवो जीवन सुधार जी ॥६९१॥

सुनकर नरपति मानतुंग वहां खड़ा हुआ उस वार।
प्रभो कृपाकर दिल की शका देवें मेरी टार जी ॥६९२॥

मानवती के साथ व्यर्थ ही कर लीना दुर्भाव।
मेरे से करवा ली प्रतिज्ञा पूरण धर दिल चाव जी ॥६९३॥

फिर भी मेरा इसके ऊपर इतना स्नेह अधिक है।
इन सबका क्या कारण है वह देवें मुझे प्रकट है जी ॥६९४॥

कुछ समय कर मौन गुरुवर दीना यों दरसाय।
संबंध ऐसा ही इण संग में वही उदय में आय जी ॥६९५॥

यही जानना चाहूं गुरुवर खोल सभी फरमाय।
विशिष्ट ज्ञान से लाभ समझकर सोचे देऊं सुनाय जी ॥६९६॥

मानतुंग अरु मानवती है निकट भवी पुण्यवान।
कर्म निर्जराकर तीजे भव में लेंगे मुक्ति स्थान जी ॥६९७॥

यही सोच आचार्य देव ने कहा सुनो हे राय।
इनका तेरे साथ संबंध क्या देऊं बात बतलाय जी ॥६९८॥

'प्राज्ञ' 'प्रसादे' सोहन मुनि कहे मिला पुण्य से योग।
अतिशय ज्ञानी ज्ञान देखकर बता रहे संयोग जी ॥६९९॥

इसी भरत में पृथ्वी भूषण नगर ऋद्धि भंडार।
पृथ्वी पालक तिलक सेन वहां भूप बड़ा सुखकार जी ॥७००॥

उसी नगर में सेठ धनदत्त रहता था खुशहाल।
उनके आज्ञाकारी पुत्र दो जिनदत्त अरु जिनपाल जी ॥७०१॥

दोनों बंधव बैठे हाट पर करें खूब व्यापार।
बोले झूंठ अरु बहुत कमावें था ऐसा व्यवहार जी ॥७०२॥

अग्रज ने निज लघु बंधव पर डाल दिया सब भार।
आप करे वहां मौज मजे अब नहीं सार संभार जी ॥७०३॥

एक दिन पुण्य योग से लघु को मिल गया मुनि संयोग।
वाणी सुनकर सोचे मन में त्यागूं अघ का रोग जी ॥७०४॥

होकर खड़े नियम ले लीना झूंठ कभी नहीं बोलूं।
नैतिकता से काम करूंगा नहीं कम नापू तोलूं जी ॥७०५॥

नियम निभावे अच्छी तरह से ग्राहक हाट पर आय।
सही भाव सुन करके वहां से अन्य हाट पर जाय जी ॥७०६॥

वहां पर था व्यापार झूंठ का झूंठे लोग कमावें।
ठप्प हो गया काम हाट का ग्राहक कोई नहीं आवे जी ॥७०७॥

शनै-शनै सब रकम चली गई नहीं रहा व्यापार।
एक दिन अग्रज आकर देखे रुक गया है रुजगार जी ।।७०८।।

नहीं सामान नजर में आवे हाट पड़ी है खाली।
बही खोलकर देखे रकम बिन दीख रही है ठाली जी ।।७०९।।

मन में सोचे इसने सारी दीनी रकम उड़ाय।
या तो जुआ खेले भाई अथवा लीनी है दबाय जी ।।७१०।।

पूछे भाई कहां रकम है साफ-साफ बतलाय।
दुकान में बही खाते में और कहां वह जाय जी ।।७११।।

देख लिया मैं अच्छी तरह से कुछ भी नहीं दिखलाय।
यही समझ में आती मेरे दीनी रकम उड़ाय जी ।।७१२।।

दुर्व्यसनों में खर्च करी तू घर की रकम थी सारी।
लघु बंधव कहे नहीं व्यसन कोई जांच करें सब मोरी जी ।।७१३।।

वही खाते अरु हाट दिखा रहे तेरे सारे काम।
सामान रहा नहीं बात सत्य है कह दूं बात तमाम जी ।।७१४।।

मुनिराज से नियम लिया है झूंठ कभी नहीं बोलूं।
धन हानि का यही कारण है मूल बात यह खोलूं जी ।।७१५।।

लोग यहां पर झूंठ बोलकर ग्राहक लेय पटाय।
मुझ से झूंठ बोलकर ठगना ग्राहक को नहीं आय जी ।।७१६।।

जिनदत्त कहे नहीं चले यों करो अवसर अनुसार।
तू तो सत्य बोलकर हमको, देगा दुक्ख अपार जी ।।७१७।।

अब तो सत्य को तजकर अपना वही करो व्यापार।
जिनपाल कहे सत्य न छोडूं चाहे प्राण अपहार जी ।।७१८।।

यह सुनते ही क्रोध छा गया आंखें हो गई लाल।
पाषाण उठा कर मारा जोर से अनुज हुआ बेहाल जी ।।७१९।।

लघु बंधव छटपटा रहा पर समझा करे बहाना।
यदि पास में जाऊं इसके मुझे पड़े मनाना जी ।।७२०।।

सावचेत हो देखे ज्येष्ठ को नहीं दे रहा है ध्यान।
कुछ सरक मस्तक रख दीना चरणों मांहि आन जी ।।७२१।।

अश्रुधार से पैर धो दिये किंतु दया न आई।
पैर खींचकर धक्का दीना नीचे दिया गिराई जी ।।७२२।।

उससे लघु बंधव के दिल में तीव्र वेदना आई।
चंद समय में देह तजी अरु परभव गया सिधाई जी ।।७२३।।

निश्चेष्ट लख लघु बंधव को अग्रज पास में आय।
उलट पलटकर लख रहा उसको किंतु शव दिखलाय जी ।।७२४।।

अब तो ज्येष्ठ को ध्यान हुआ यह कहता सच्ची बात।
अनुभव करके निज गलती को सोचे अब कहां भ्रात जी ।।७२५।।

भातृ प्रेम हृदय में उमड़ा गहरा रुदन मचाय।
लोग इकट्ठे होकर उनको धीरज रहे बंधाय जी ।।७२६।।

ले जाकर के मरघट मांहि दीना उन्हें जलाय।
याद कर रहा अनुज को अग्रज किंतु अब कहां पाय जी ।।७२७।।

किंतु मानता सदा स्वयं को बंधव का हत्यारा।
जिनदत्त के आठों पहर ही बस रहा भाई प्यारा जी ।।७२८।।

काम करे अब घर का किंतु रहता भाई याद।
खेद खिन्न रहता भाई बिन सोचे हुआ बरबाद जी ।।७२९।।

स्मृति भाई की बनी रहे ऊर में रहता था बेहाल।
समय निकलते एक दिन वह भी गया काल के गाल जी ।।७३०।।

पूर्व की सब बात सुनाकर गुरुदेव फरमाय।
लघु भव करके छोटा बंधव मानवती भव पाय जी ।।७३१।।

ज्येष्ठ बंधु तुम मानतुंग नृप बने यहां पर आय।
सत्यधारी का अपमान किया था उसका ही फल पाय जी ।।७३२।।

पांव हटाये अतः हथेली पर चरण धरवाये।
अश्रु से धोए चरणों को अतः चरण जल पाए जी ।।७३३।।

मातृ स्नेह जो रहा हृदय में उसका फल यह जान।
अनन्य प्रेम है मानवती पर वैसा तुम पर मान जी ।।७३४।।

सत्यव्रत की दृढ़ साधना की पूर्व भव कीनी।
उससे विचित्र प्रतिज्ञा मानवती पूरण करवा लीनी जी ।।७३५।।

हे राजन यह कर्म शुभाशुभ जीव साथ में लाय।
निश्चय भोगे वही आत्मा इसमें संशय नाय जी ।।७३६।।

कर्म बांधते नहीं सोचता भोगे उदय में आय।
डरते रहो कर्म बन्धन से गुरु ऐसा फरमाय जी ।।७३७।।

सुन करके पूर्व भव राजा वैराग्य मन में आय।
मानवती भी सुनी चित्त में अरुचि चित्त में लाय जी ।।७३८।।

कर जोड़ी दोनों ही बोले यह संसार असार।
गुरु चरणों में दीक्षा ले हम लेवें नर भव सार जी ।।७३९।।

जैसी इच्छा वैसा करिये ढील कीजिए नाय।
अवसर गया पुनः नहीं आवे गुरुदेव फरमाय जी ॥७४०॥

विधिवत वंदन करके आये वापिस अपने स्थान।
राज्य भार दे बुद्धिदत्त को कहा सुनो धर ध्यान जी ॥७४१॥

अब हम अपना कारज सारे करें आत्म कल्याण।
अतः दीक्षा की आज्ञा देकर कारज करो महान जी ॥७४२॥

पुत्र प्रार्थना करी बहुत पर दीना उसे समझाय।
महोत्सव से दीक्षा लीनी रानी और महाराय जी ॥७४३॥

मानवती गुरुणी के पास अरु मानतुंग गुरु पास।
विनय भाव से आज्ञा पालकर बनें गुणों के रास जी ॥७४४॥

गुरु गुरुणी की सेवा में रह कीना ज्ञान अभ्यास।
जप तप करणी करके दोनों कीने कर्म विनाश जी ॥७४५॥

मास संथारा करके अन्त में स्वार्थ सिद्ध लिया पाय।
वहां की भव स्थिति पूरण करके महा विदेह में जाय जी ॥७४६॥

श्रेष्ठ कुल में लेके जन्म वे लेंगे दीक्षा धार।
अन्त सभी कर्मों का क्षय कर पावें मोक्ष सुखसार जी ॥७४७॥

दो हजार गुण चाली साल की बसंत पंचमी आई।
जोड़ करी जयपुर शहर के लाल भवन के मांहि जी ॥७४८॥

कथा जैसी देखी वैसी ही तत्क्षण जोड़ बनायी।
कम ज्यादा का मिथ्या दुष्कृत हो, कहता है हरषायी जी ॥७४९॥

—दोहा—

प्राज्ञ शिष्य सोहन कहे, सुनो सश्रद्धा ध्यान।
यतना पूर्वक जो पढ़े, पाये सम्यक् ज्ञान॥

सकारण जयपुर रहे, मिलकर ठाणा पांच।
चौदह माह रहकर वहां कीना चातुर्मास॥

२ | अंधकार से प्रकाश की ओर

महासती मंजुला जीवन चमकायो संकट बीच में ।।ध्रुव।।

पांचों पद को वन्दन करके, भक्ति हृदय में धार ।
ज्ञान दान दाता गुरुवर को, प्रणमे बार हजार जी ।।१।।

कष्टों की काली रजनी में धर कर धैर्य अपार ।
कैसे भाग्य-दिवाकर दमका यह सुनिये अधिकार जी ।।२।।

श्रीपुर नामा नगर मनोहर सुखी वसे नर-नार ।
वहीं सेठ श्रीकांत वसे नित हितकारी गुणधार जी ।।३।।

घर में मां और नार मंजुला, पद्मा भगिनी खास ।
पय पानी सा प्रेम परस्पर, रहे स्वच्छ आवास जी ।।४।।

घर नारी है सती साध्वी पति आज्ञा अनुसार ।
धर्म ध्यान में मगन, लगन से भजे नित्य नवकार जी ।।५।।

देख-देख अपने परिजन को, माता हृदय प्रसन्न ।
सुबह-शाम नित बड़े जनों को, छोटे करें नमन्न जी ।।६।।

रमा रमण करती है उसके खूब चले व्यापार ।
न्याय नीति से पैसा कमाना, एक लक्ष्य लिया धार जी ।।७।।

सभी तरह का आनन्द घर में, किन्तु नहीं सन्तान ।
सदा खटकती कमी एक, पर, करता क्या इन्सान जी ।।८।।

जिस घर में शिशु क्रीड़ा नाहीं वह घर शून्य मसान ।
सास वहू के दिल को साले यही दुःख असमान जी ।।९।।

पोते का मुख देखू प्रतिदिन गोद रमाऊं खूब ।
किन्तु निष्फल देख आश को, गई हृदय से ऊब जी ।।१०।।

सास वधू भी करती बातें है गहरी अन्तराय ।
जब टूटेगी तभी मिलेगी, हमें सन्तती आय जी ।।११।।

मस्त रहे श्रीकांत हमेशा, निज धन्धे के मांय।
सती मंजुला गृह सेवा में, रही समय बीताय जी ।।१२।।
पद्मा खेले खेल प्रतिदिन घर से बाहर जाय।
पड़ोसियों से बातें करके अपना मन बहलाय जी ।।१३।।
किशोर अवस्था में आई लख भाभी नित समझाय।
अब बाहर जाकर के रमना अच्छा नहीं दिखाय जी ।।१४।।
भाभी की हित भरी बात यह पद्मा को नहीं जंचती।
माता को सब कह भाभी से मन ही मन में खिचती जी ।।१५।।
कभी पुत्री को समझाती तो, कभी बहू को माता।
मीठे शब्दों से दोनों को उपजाती नित साता जी ।।१६।।
एक दिवस श्रीकांत आय के करे मात से अरजी।
लेकर माल विदेशें जाऊं ऐसी मेरी मरजी जी ।।१७।।
मां बोली यह काम तुम्हारा मेरी नहीं है रोक।
पुत्र कहे आशीष दीजिए, चरणे देऊं धोक जी ।।१८।।
है आशीष सदा ही मेरी, तुम सानन्द सिधाओ।
सावधान रह काम करो नित, सफल होये पुनि आओ जी ।।१९।।
नार मंजुला के समीप आ मांगे आज विदाई।
सारे घर की जिम्मेवारी प्रिय! तुझे संभलायी जी ।।२०।।
चले सुचारु गृही व्यवस्था, जिसका रखना ध्यान।
पद्मा का भी खयाल रखना, नहीं है पूरा ज्ञान जी ।।२१।।
सभी बात की स्वीकृति पति को दे दीनी तत्काल।
कुछ भी गलती नहीं करूंगी, सदा रहूं हुशियार जी ।।२२।।
प्रेम भरे मीठे शब्दों से पद्मा को समझाय।
मां की आज्ञा नित्य मानना हित शिक्षा चितलाय जी ।।२३।।
अपने हित की बात अगर भाभीजी तुझे बताय।
विनय प्रेम के साथ ग्रहण कर लेना शीश चढ़ाय जी ।।२४।।
उसी समय पद्मा यों बोली सुनलो मेरे भाई।
खेल-कूद में बाधक भाभी को देवें समझाई जी ।।२५।।
भाई बोला वह बाधक क्यों हो तुझ खेलन मांही।
मायत के घर खेल कूद की करता कौन मनाई जी ।।२६।।
श्वसुर गेह परतन्त्र कहावे बन्धन में बंध जावे।
इच्छित ढंग से नहीं रह सकती भार बहुत आ जावे जी ।।२७।।
फिर भी कहता सदा बड़ों की, आज्ञा लेना मान।
पद्मा कहे आज्ञा पालन का सदा रक्खूंगी ध्यान जी ।।२८।।

आज्ञा लेकर श्रीकान्त ने, लिया सार्थ को संग।
शुभ मुहूर्त में होय रवाना, बढ़ रहे सहित उमंग जी ।।२९।।
पति जाने के बाद मंजुला सोचे मन के मांय।
गृह कार्य की जिम्मेवारी मुझ पर गई है आय जी ।।३०।।
पद्मा से कहती यों भाभी सुनलो देकर ध्यान।
लड़कों के संग खेल खेलना, नहीं मेरे कुल की शान जी ।।३१।।
भाभी की इस रोक टोक से पद्मा लाती रोष।
बार-बार क्यों कहती मुझको सदा देखती दोष जी ।।३२।।
उधर सार्थ नित आगे बढ़ता, रुका जलाशय पास।
खान-पान में व्यस्त सभी जन मोद करें सोल्लास जी ।।३३।।
उस जंगल में श्रीकान्त को कुटिया दी दिखलाई।
कौन रहे इस निर्जन वन में, देखूं वहां पर जाई जी ।।३४।।
चला अकेला सबको तजकर, आया कुटिया पास।
देखा योगी ध्यान मग्न है, मुख पर सौम्य प्रकाश जी ।।३५।।
तपस्तेज से होय प्रभावित रुका वहीं श्रीकांत।
ध्यान खोल योगी ने देखा खड़ा एक नर शान्त जी ।।३६।।
योगी को जब नमन किया तो दिया उसे आशीष।
फिर पूछा तुम कहां से आये किधर चले हो ईश जी ।।३७।।
कैसे आकर यहां बैठे हो, क्या है मन में इच्छा।
ऐसे तो हम साधु हैं पर करली फिर भी पृच्छा जी ।।३८।।
वह बोला श्रीपुर से आया सारथ को ले संग।
सबको वन में छोड़ यहां पर दर्शन किया सुरंग जी ।।३९।।
सुनो बन्धुवर दर्शन हो गये अब आ रही है रात।
भयकारी यह सारा वन है छोड़ो जल्दी भ्रात जी ।।४०।।
जाने को तैयार हुआ तब आया उसे विचार।
पुत्र प्राप्ति के लिए पूछलूं बता देय उपचार जी ।।४१।।
फिर सोचा मैं क्यों कर पूछूं जो होगा सो होय।
कर्म रेख को टाल सके नहीं इस जगती में कोय जी ।।४२।।
असमंजस में पड़ा-पड़ा वह सोच रहा श्रीकांत।
जाने को भी भूल गया है हुआ विचार में शान्त जी ।।४३।।
अधर भूल में देख साधु कहे क्या है मन में भाव।
सुनकर वाणी श्रीकांत को कहने का हुआ चाव जी ।।४४।।
घर में सब साधन हैं पूरे फिर भी एक अभाव।
अहो निशी खटक रहा है मुझको व्यर्थ हुए सब दाव जी ।।४५।।

बिना पुत्र के घर सूना है सन्तति हीन कहाऊं।
नारी बांझ कहाती जग में इससे मैं दुःख पाऊं जी ।।४६।।

सुनकर सारी बात सन्त ने ध्यान त्वरित ही कीना।
चन्द समय पश्चात ध्यान तज उत्तर ऐसे दीना जी ।।४७।।

पुत्र प्राप्ति का योग तुम्हारे भद्र ! मुझे दिखलाय।
गर्भाधान हो अगर आज तो उत्तम सुत को पाय जी ।।४८।।

सुनो सार्थपति उस बालक में एक योग्यता होगी।
जब भी हंसी हंसेगा मुख से एक लाल उगलेगी जी ।।४९।।

ऐसे प्रभावी पुत्र जन्म की बात सुनी सुख पाया।
किन्तु बने यह कैसे संभव चेहरा झट मुरझाया जी ।।५०।।

बोला यह तो असंभव है मैं हूं इस वन मांय।
वह बैठी है श्रीपुर में कैसे जाया जाय जी ।।५१।।

योगी बोला चिन्ता छोड़ो मैं कर दूंगा उपाय।
सुनकर कहे श्रीकांत प्रभो ! वह दीजे मुझे बताय जी ।।५२।।

जिससे मैं कुल दीपक का मुख देख सकूं जीवन में।
ना जाने क्या होवे आगे इच्छा रहे न मन में जी ।।५३।।

साधु कहे यह सम्मुख बैठा हंस तुम्हें पहुंचासी।
पुनः पीठ पर बैठा तुमको इसी स्थान ले आसी जी ।।५४।।

हर्षयुक्त हो श्रीकांत ने, कृतज्ञता दरसाई।
इधर सन्त का इंगित पाकर हंस गया है आई जी ।।५५।।

बिठा पीठ पर श्रीकांत को हंस उड़ा तत्काल।
एक घड़ी में अपनी छत पर पहुंचा दीना चाल जी ।।५६।।

दस्तक दे आवाज लगाई, प्रिये मंजुले नार।
जागो उठो मैं आया यहां पर श्रीकांत भरतार जी ।।५७।।

सुन आवाज लिया सब परिचय, खोल दिया है द्वार।
प्राणेश्वर को देख हृदय में आया हर्ष विचार जी ।।५८।।

चरण वन्दना करके पूछा इतनी रात मंझार।
कैसे आना हुआ आपका, कहदो हे भरतार जी ।।५९।।

अपना सारा हाल सुनाकर कहा समय अनमोल।
तुमसे मिलने को आया हूं, हंसो रमो दिल खोल जी ।।६०।।

प्रेम भरी बातों में दम्पती, दीना पहर विताय।
जाने का अब समय हो गया श्रीकान्त दरसाय जी ।।६१।।

विस्मित होकर बोली यह क्या रहे आप सुनाय।
समय बांध कर मैं आया हूं झूंठ न वह हो जाय जी ।।६२।।

अगर समय पर नहीं पहुंचा तो साधु करले रोष।
अपने रोष के अन्दर करदे न जाने क्या दोष जी ॥६३॥

कहे मंजुला यह तो अच्छा साधु का उपकार।
किन्तु आप माता से मिल लें ठीक रहे इस बार जी ॥६४॥

अगर मिलूं माता से और वह कहे अभी रुक जावो।
उलझन होगी मेरे सम्मुख, तुमही सत्य बताओ जी ॥६५॥

मेरे भी सन्मुख ऐसी ही उलझन होगी नाथ।
गर्भ वृद्धि जब होगी मेरे कौन सुनेगा बात जी ॥६६॥

मेरे वचनों पर उस टाइम कौन करे विश्वास।
अतः अभी मैं जगा सास को लाऊं आप के पास जी ॥६७॥

नहीं-नहीं मत लाओ माँ को माँ ममता की खान।
यह लो मेरी कर की मुद्रिका, रहे निशानी शान जी ॥६८॥

जब प्रकट हो गर्भ तुम्हारा देना इसे दिखाय।
पतिव्रता है धर्म अखण्डित, ऐसा समझ सब जाय जी ॥६९॥
मैं भी पुनः लौट कर आऊं, जल्दी करूं न बार।
चिन्ता कुछ भी मत करना तुम, रहना अति हुशियार जी ॥७०॥
स्वामी की दी हुई मुद्रिका रखी सुरक्षित स्थान।
सदा देखती रहती उसको पूरा रखती ध्यान जी ॥७१॥
हंस उसी क्षण उड़ा उसे ले आया योगी पास।
श्रीकांत कर सादर वन्दन करता है अरदास जी ॥७२॥
जीवन भर नहीं भूलूंगा मैं है अनन्त उपकार।
कृपा करो सेवा फरमावो, हाजिर तावेदार जी ॥७३॥
सन्त कहे निस्वारथ सेवा, करूं भावना मेरी।
आया है सन्तोष हृदय में हुई सहायता तेरी जी ॥७४॥
इतना कहकर योगी जी तो, ध्यान मग्न हो जाय।
श्री कान्त भी वन्दन करके सार्थ बीच आ जाय जी ॥७५॥
सभी कार्य से निवृत होकर, सार्थ बढ़ा है आगे।
स्थान-स्थान पर क्रय विक्रय कर लाभ कमाया सागे जी ॥७६॥
गर्भ वृद्धि को देख मंजुला, मन में अति संकुचावे।
सभी छिपा सकती नारी पर कैसे इसे छिपावे जी ॥७७॥
पुत्र वधू का उदर देखकर सासू गई चकराय।
कहो मंजुला क्या कारण है कैसे उदर दिखाय जी ॥७८॥
पुत्र गये को समय हुआ अति, फिर क्या हुई यह बात।
भाभी के पहले ही पद्मा बोल उठी सुन मात जी ॥७९॥

हे माता क्यों गुस्सा करती यह तो अच्छी बात।
तेरी इच्छा पूरी होगी व्यंग्य कसा साक्षात जी ॥८०॥
मात कहे चुप रह तू थोड़ी बोले बिना विचार।
बहू मुझे उत्तर दे देगी, तुझको क्या अधिकार जी ॥८१॥
कहे मंजुला सुनो सास जी शंका दूर निवारो।
कुलटा मत समझो हे माता ! सांच हृदय में धारो जी ॥८२॥
जिनके संग हुई है शादी गर्भ उन्हीं का जानो।
तभी व्यंग्य से पद्मा बोली भाभी कहे सो मानो जी ॥८३॥
मुझको शिक्षा देती मत जा उन लड़कों के पास।
खुद का पता नहीं क्या कीना है तुझको शाबास जी ॥८४॥
स्वयं गुरुजी बैंगन खायें दें पर को उपदेश।
ऐसे ही कर गुजरी भाभी, शर्म नहीं है लेश जी ॥८५॥
बुरा काम नहीं किया बाईजी सोच समझकर बोलो।
चारित्र पर आक्षेप लगाती लज्जा रख मुंह खोलो जी ॥८६॥
बहू की वाणी सुन सासू जी, गहरा कर गई रोष।
बेटी को क्या सुना रही है कुल को दीना दोष जी ॥८७॥
श्रीकांत को गये यहां से हो गये बारह मास।
बता कहां से लाई गर्भ को चले आठवां मास जी ॥८८॥
शांत स्वर में कहे मंजुला, शंका दूर हटायें।
पुत्र आपका एक रात को मेरे पास में आये जी ॥८९॥
पद्मा कहे क्यों बोलो भाभी, बिल्कुल झूंठ सफेद।
सबकी आँखों धूल डालते आता नहीं कुछ खेद जी ॥९०॥
नहीं डालती धूल किसी के, है प्रमाण मुझ पास।
सास कहे ला दिखला हमको हो जावे विश्वास जी ॥९१॥
त्वरित मंजुला जा कमरे में लेय मुद्रिका आई।
सास हाथ में देकर बोली, देखो ध्यान लगाई जी ॥९२॥
जिस रात्रि में आकर के गये, थी यह कर के मांही।
उसे प्रमाण में दीनी मुझको, सौंपी तुमको लाई जी ॥९३॥
देख मुद्रिका सोचे माता, श्रीकांत के कर में।
चरण वन्दना करते देखी मैंने अपने घर में जी ॥९४॥
अतः सत्य है बात बहू की कुछ भी संशय नांही।
सासू को सन्तोष हुआ पर पद्मा जाल बिछाई जी ॥९५॥
हे माताजी यह प्रमाण तो अप्रमाण है पूरा।
जाते समय मुझे यह मुद्री दे गया भ्रात सनूरा जी ॥९६॥

उसे दिखाकर यह भाभी निर्दोष चाहती होना।
ऐसे छलबल करके अपना चाहती कल्मष धोना जी ॥९७॥

आखिर रोष भरी आंखों से कहे मंजुला बोल।
पद्मा तूने नहिं देखा है यों ही मुख मत खोल जी ॥९८॥

सास कहे बस देख लिया है नहीं तुम पर विश्वास।
कुल कलंकिनी निकल यहां से, तज दे घर की आस जी ॥९९॥

बिना विचारे कभी न बोलो, होता अनरथ भारी।
प्राज्ञ "प्रसादे" सोहन मुनि कहे समझ बचो नर नारी जी ॥१००॥

शब्द श्रवण कर सासूजी के सहम गयी उस बार।
आंखों पर छा गया अंधेरा, आया दुःख अपार जी ॥१०१॥

प्राणनाथ जब तक नहीं आवें, तब तक धीरज कीजे।
इनके आने पर जैसा हो, वैसा निर्णय दीजे जी ॥१०२॥
सासू कहे लोगों की वाणी मुझसे सही न जावे।
वृद्धापन में हो बदनामी, कुलटा यहां रहावे जी ॥१०३॥
तेरे यहां रहने से होगा घर का सत्यानाश।
अतः यहां से निकल शीघ्र तू छोड़ यहाँ की आश जी ॥१०४॥
वज्रपात सा वचन श्रवण कर नयनों नीर भराय।
दुःख सागर में सती मंजुला डूबी व्यथा सवाय जी ॥१०५॥
रोते बोली अहो सासूजी, पत्थर दिल नहीं होवें।
यहां सिवा है कौन ठिकाना जरा होश नहीं खोवें जी ॥१०६॥
सास कहे तू प्रथम सोचती, रोने से क्या पावे।
नहीं देखना चाहती मुख मैं निकल यहां से जावे जी ॥१०७॥
पैर पकड़ कर सासूजी के रो रही झारमझार।
दया करो अब मुझ दुखिया पर सुनो विनय इस बार जी ॥१०८॥
पत्थर दिल हो गया सास का सुने न कुछ भी कान।
पद्मा से भी अरजी की पर दिया न उसने ध्यान जी ॥१०९॥
सोचे कर्म उदय में आये कौन सुने इस बार।
किये कर्म का फल भोगे बिन नहीं होगा छुटकार जी ॥११०॥
हंस-हंस करके पूरव भव में कीने अशुभ अपार।
अब रोने से क्या होवेगा, मंजुला करे विचार जी ॥१११॥
अब तो यहां से जाना होगा मंत्र जपा नवकार।
यही सहारा केवल अपना, लीना मन में धार जी ॥११२॥
जाते वक्त सास चरणों में झुककर शीश नवाया।
सासू ने पद खींच लिये हैं, और घृणित शब्द सुनाया जी ॥११३॥

कहे मंजुला मां जो मेरा नहीं किया विश्वास।
अतः अंजना सासू के सम पाओगी दुःख रास जी ॥११४॥
खूब बनी तू सती अंजना पद्मा यों दरसाय।
भाभी को घर बाहर करके दिया कपाट लगाय जी ॥११५॥
सोचे मंजुला कौन हमारा इस जगती के मांय।
भज करके नवकार मंत्र को चलदी जंगल मांय जी ॥११६॥
सोचे क्या मैं पीहर जाऊं, बात याद तब आई।
गई अंजना पीहर में तब, खूब अनादर पाई जी ॥११७॥
अब कर्मों से मैं ही लडूंगी नहीं कहीं पर जाऊं।
मैंने बांधे मैं ही भोगूं साथी किसे बनाऊं जी ॥११८॥
दुःख समय में कोई न अपना, सभी पराये मान।
ले शरण नवकार मंत्र का, आगे किया प्रस्थान जी ॥११९॥
कहाँ जाना और कहाँ ठहरना, नहीं दिशा का ज्ञान।
वन फल खाकर ठंडा जल पी, चल रही है अनजान जी ॥१२०॥
शील धर्म की रक्षा हित वह कभी न देखे ऊपर।
वृक्ष छांह में सो जाती थी रात्रि समय भूपर जी ॥१२१॥
तन से भी अब मोह नहीं है, वन पशु आ खा जाय।
दुखी जीव की दशा यही है, निर्मोही हो जाय जी ॥१२२॥
नौ महीने जब पूर्ण हो गये, प्रसव वेदना पाई।
वट वृक्ष नीचे आकर सोयी मंजुला बाई जी ॥१२३॥
कुछ ही क्षण में बालक जन्मा था नर अति पुण्यवान।
सावधान हो उठा पुत्र को हर्षित हुई महान जी ॥१२४॥
यदि होते मुझ प्राणनाथ तो करते उत्सव महान जी।
स्वामी स्मरण में सती नयन में छलके आंसू आन जी ॥१२५॥
रोने से दिल हुआ जो हल्का तब आया कुछ भान।
शुचि करना है इस बालक को रखूं कौन से स्थान जी ॥१२६॥
सोच पुत्र को बांध वस्त्र में, लटकाया उस डाल।
शुद्धि हेतु वह सर पर आई चलकर के तत्काल जी ॥१२७॥
स्नान करे वह फिर भी हर क्षण शिशु का रखे खयाल।
बार-बार उठ-उठ कर देखे क्या है उसका हाल जी ॥१२८॥
माँ की ममता माँ ही जाने और न जाने कोय।
अपने दुःख को सहे खुशी से, सुत दुःख सहन न होय जी ॥१२९॥
अति आवश्यक कार्य शुद्धि का इसलिए यहां आई।
सोच रही है सती मंजुला संभालूं झट जाई जी ॥१३०॥

भृकुटी चढ़ा भूप यों बोला, तुझे बनाऊं रानी।
मेरा निर्णय यही रहेगा, कान खोल सुन वाणी जी ।।१६५।।

बन्दी सम अबला है नारी, कितना बल दिखलावें।
रोना ही हथियार नार का वही काम में लावे जी ।।१६६।।

रुदन देखकर नरपति भी वहां से चले गये तत्काल।
जाते गीदड़ धमकी दे गया, वह कायर नरपाल जी ।।१६७।।

पति वियोग और पुत्र याद में, रोती रही वह नार।
साहस धर फिर शान्त होय के, मंत्र जपे नवकार जी ।।१६८।।

अब बालक की बात सुन लो जब पुण्य साथ में होय।
वन में, रण में, अरिदल, जल में, शीघ्र बचावे कोय जी ।।१६९।।

बालद ले बिणजारा आया, वृक्ष तले ठहराया।
नारी से बोला डाली पर किसने क्या लटकाया जी ।।१७०।।

हलचल भी हो रही है इसमें, ना जाने क्या होय।
उत्सुकता वश उतार लावें लेवें अन्दर जोय जी ।।१७१।।

उतार पोटली देखा उसको गहरा अचरज पाया।
किसने इसमें नवजातक को बांध यहां लटकाया जी ।।१७२।।

पुत्रहीन बणजार दम्पती, नवजातक को देख।
आनन्दित हो गये हृदय में जिसका नहीं है लेख जी ।।१७३।।

उठा बाल को पत्नी ने तब, सीने से चिपकाया।
मानो दीन को रत्न मिल गया, अपना भाग्य सराया जी ।।१७४।।

कौन छोड़ कर गई मात यह, इसकी खोज करावें।
जगह जगह पर भृत्य घूमकर पुनः लौटकर आये जी ।।१७५।।

कहीं पता नहीं मिला है हमको सभी स्थान फिर आये।
भाग्य प्रबल है नाथ! आपका सुत तज सिधाये जी ।।१७६।।

नारी बोली चिंता तजिये, बाल सलौना पाया।
पुण्यवान यह बालक हमारे सहज हाथ में आया जी ।।१७७।।

औरों का घर उजाड़ अपना घर आबाद बनाना।
ऐसा नहीं उपयुक्त हमें है पति कहे सुनो जनाना जी ।।१७८।।

नारी बोली नहीं कहीं से, छीन यहां हम लाये।
पालन-पोषण करने वाला इसको आश्रय चाहे जी ।।१८९।।

पति ने कहा बात है उत्तम, दया हमारा धर्म।
दीन दुःखी असहाय जीव को, आश्रय देना कर्म जी ।।१८०।।

वाणी सुन स्वामी की रमणी मन में हुई निहाल।
वृक्षदत्त दूं नाम पुत्र का, मिला वृक्ष की डाल जी ।।१८१।।

पति बोला यह नाम मुझे तो, जँचा नहीं दिल मांही।
वन शोभा लख कहे बिणजारा, कुसुम नाम सुखदाई जी ।।१८२।।

अच्छा-२ यही नाम दें, यह मेरे मन भाया।
पुत्र नेह से माँ के स्तन में, सहज दूध भर आया जी ।।१८३।।

दूध पिलाकर लगी रमाने बाल हँसा तत्काल।
हंसी साथ में लाल आ गयी, देख हुई खुशहाल जी ।।१८४।।

लाल उगलता लाल हमारा, भाग्यवान है लाल।
सुनो प्रिये ! क्या मिला हमें तो मिला स्वयं गोपाल जी ।।१८५।।

पुत्र मंजुला का पलता है देखो पर घर मांही।
पुण्यवान जहाँ जावे वहीं पर पावे रंग बधाई जी ।।१८६।।

इधर सेठ श्रीकान्त गया था सार्थ संग परदेश।
गहरा धन्न कमाकर वापिस, आया है निज देश जी ।।१८७।।

घर आकर आवाज लगाई माता दौड़ी आई।
द्वार खुला तब माँ चरणों में दीना शीश झुकाई जी ।।१८८।।

माँ ने सिर पर हाथ रखा और दीनी शुभ आशीष।
फूलो फलो आनन्द मनाओ, भजो हमेशा ईश जी ।।१८९।।

पद्मा भी भाई के पद में लिपट गई है आय।
बड़े स्नेह से उठा बहिन को लीनी गले लगाय जी ।।१९०।।

माता भगिनी दोनों पूछे कुशल क्षेम की बात।
कहाँ गये क्या-क्या वहाँ कीना बता दिया अवदात जी ।।१९१।।

चारों ओर घूर रही आँखें, नहीं नार दिखलाई।
क्या कारण है नहीं आने का, शंका मन में आई जी ।।१९२।।

उत्सुकता भी जगी हृदय में, देखूँ अपना लाल।
किन्तु पूछ सका नहीं कुछ भी क्या है उसका हाल जी ।।१९३।।

अल्प समय सन्तोष रखा फिर बोला शंका त्याग।
पद्मा तेरी भाभी न आई, कहाँ गई वह लाग जी ।।१९४।।

क्या जवाब दे पद्मा मुख से हो गई बन्द जुबान।
माँ कहे उसका नाम भूल जा, मत दे उस पर ध्यान जी ।।१९५।।

गहरी शंका हो गई मन में, क्या कारण दो बतलाय।
मत पूछो बेटा ! अब उसकी सुनकर दुःख तू पाय जी ।।१९६।।

ऐसा क्या अपराध किया जो नहीं लूं उसका नाम।
माँ बोली कुल कलंकिनी है सुन ले बात तमाम जी ।।१९७।।

ना जाने किस पापी से वह काला मुँह कर आई।
बदनामी के भय से मैंने घर बाहर निकलाई जी ॥१९८॥

हे माता मत बोलो ऐसे पापी मुझको जानो।
एक रात मैं आया यहाँ पर बात मेरी सच मानो जी ॥१९९॥

सुनने पर भी मिटी न शंका, मां बोली सुन जाया।
बारह महिने पूर्व सार्थ ले गया कहाँ से आया जी ॥२००॥

आया तो किस कारण आया क्यों न मिला तू मुझ से।
शंका भरी सभी ये बातें, पूँछूँ अब मैं तुझ से जी ॥२०१॥

साधु से हुई सभी बारता, दीनी साफ सुनाय।
हंस पीठ पर चढ़कर आया वैसे गया सिधाय जी ॥२०२॥

समयबद्ध होने से यहाँ पर तुझ से मिल नहीं पाया।
देरी से जाने पर योगी, होता कुपित सवाया जी ॥२०३॥

ना जाने क्या अनरथ करता अतः गया तत्काल।
तुझसे मिल भी सका नहीं मैं, था दुविधा का हाल जी ॥२०४॥

माँ बोली वह अनर्थ फिर भी टाले नहीं टलाया।
समझदार होकर भी मुझ से क्यों नहीं मिलने आया जी ॥२०५॥

माता भूल नहीं की मैंने, उसे मुद्रिका दीनी।
कहा मात को बतला देना, विदा बाद में लीनी जी ॥२०६॥

क्या तूने उस रात मुद्रिका दीनी उसके हाथ।
हाँ माता विश्वास साथ में कहता हूं सच बात जी ॥२०७॥

उसी वक्त कर लाल नेत्र माँ पद्मा को बुलवाय।
सुनते ही थर-थर वह कम्पी, चोर सदा भय खाय जी ॥२०८॥

कुपित देख श्रीकान्त कहे क्या मुद्री नहीं दिखाई।
पद्मा सोचे पाप मेरा अब प्रकट हुआ है आई जी ॥२०९॥

मैंने ही कह झूँठ वचन को, भाभी को निकलाया।
उसी पाप का बदला मेरे सम्मुख है अब आया जी ॥२१०॥

इधर रोष में माता मेरी-देती है आवाज।
सभी दोष है इसमें मेरा क्या होगा प्रभु आज जी ॥२११॥

भ्रात प्रेम है पूरा मुझ पर, जाऊँ उनके पास।
चरण पकड़ कर क्षमा मांग लूं, बात बता दूँ खास जी ॥२१२॥

गलती मुझ से हो गई भारी, द्वेष हृदय में आया।
निष्कलंक भाभी के ऊपर, झूठा कलंक लगाया जी ॥२१३॥

उस ही क्षण आ भ्रात चरण में दीना शीश झुकाय।
विलख वदन हो विलाप करती, अश्रु रही टपकाय जी ॥२१४॥

उठा बहिन को सत्वर भाई, लीनी कण्ठ लगाय।
पद्मा पीठ पर बड़े प्यार से हाथ रहा सहलाय जी ॥२१५॥

क्रोध भरे शब्दों में माता कह रही उसे सुनाय।
अरी कलेसण ! भाई के घर दीनी आग लगाय जी ॥२१६॥

हरी भरी मेरी बाड़ी को कर दीनी वीरान।
अब भाई के चरण पकड़ कर बन रही हो अनजान जी ॥२१७॥

बहू मंजुला पर इसने ही झूठा दोष लगाया।
उसे कलंकित कहके घर से बाहर भी निकलाया जी ॥२१८॥

माता इस पर इतना गुस्सा क्यों कर करते आप।
मात कहे इसने ही सारे करवाये हैं पाप जी ॥२१९॥

बहू मुद्रिका दिखा-२ कर कह रही थी सच बात।
तब पद्मा ने कहा अंगूठी मुझे दे गया भ्रात जी ॥२२०॥

इसने चुरा अंगूठी मुझ से माता तुझे दिखाई।
मैंने कर विश्वास इसी पर घर से दी निकलाई जी ॥२२१॥

पद्मा से भाई यों बोला, यह क्या मन में आई।
यह सुनते ही सिसक गई वह क्या दे उत्तर बाई जी ॥२२२॥

लज्जा और ग्लानि के कारण मुख नहीं ऊँचा होय।
सोचा कुछ हो गया और ही मन ही मन रही रोय जी ॥२२३॥

भाभी पर इल्लाम लगा दूं, फिर रोकेगी नांय।
कहाँ जायगी घूम घुमा कर वापिस घर आ जाय जी ॥२२४॥

जैसे कहूंगी वैसे चलेगी, बोलेगी फिर नांय।
क्या मालूम जाने के बाद वह आयेगी भी नाय जी ॥२२५॥

यों पद्मा घुट रही अगर जो अभी जमीं फट जाय।
उसके अन्दर घुस जाऊँ मैं और न कोई उपाय जी ॥२२६॥

माता बोली बहू ने जाते-वक्त कहा था साफ।
सती अंजना की सासू सम पछताओगी आप जी ॥२२७॥

निर्भागिन मैंने तब उसकी सुनी नहीं कुछ बात।
सारा घर बरबाद कर दिया मैंने अपने हाथ जी ॥२२८॥

इतना सुनकर श्रीकान्त भी रोता झारमझार।
शोक मग्न हो बैठ गया ज्यों होवे मूर्त्याकार जी ॥२२९॥

पुत्र दशा को देख मात का चेहरा गया मुर्झाय।
कहा पुत्र से शोक न कीजे लीजे कर्म निभाय जी ।।२३०।।

होना था सो हो गया बेटा, उसका नहीं उपाय।
इसकी चिंता सब को है अब दिल में शांति बनाय जी ।।२३१।।

जब तक जीवन तब तक दो तुम कर्तव्यों पर ध्यान।
कर्तव्य विमुखता छोड़ो खुद को, कर्तव्य परायण मानजी ।।२३२।।

यह सुनते ही खड़ा हो गया माता सच फरमाय।
अभी खोजने जाऊँ उसको, लूं कर्तव्य निभाय जी ।।२३३।।

जाने को तैयार देखकर, पद्मा पद लिपटाय।
विलख-२ कर बोल रही है मुझको क्षमा दिलाय जी ।।२३४।।

नहीं दोष पद्मा कुछ तेरा, सब कर्मों की माया।
इतना कह चल दिया हृदय में पंच पदों को ध्याया जी ।।२३५।।

जाते देख पुत्र को माता रोने लगी तत्काल।
रुदन देख माता का बेटा आया पास में चाल जी ।।२३६।।

कहे माता हमको अनाथ कर तू न छोड़ कर जाय।
तुझ बिन मेरे कौन यहाँ पर शून्य जगत हो जायजी ।।२३७।।

मेरा है कर्तव्य खोजना, कहीं मुझे मिल जाय।
मिल जाये तो आ जाऊंगा—आगे कहा न जाय जी ।।२३८।।

क्या कहता है बात पुत्र यह, नहीं मिले, नहीं आय।
मेरा मन कह रहा मिलेगी जीवित ही जग मांय जी ।।२३९।।

रोको मत, अब जाने दो यों कह कहकर गया सिधाई।
जाते पुत्र को देख मात जी, गिरी भूमि पर जाई जी ।।२४०।।

अचेत देख माता को पद्मा, दौड़ पास में आई।
चीख मार वह भी अचेत हो, पड़ी भूमि घस खाई जी ।।२४१।।

बहुत देर तक माँ पुत्री दो पड़ी रही उस स्थान।
कौन उठाने वाला उनको कौन धैर्य दे आन जी ।।२४२।।

शीतल स्वच्छ हवा ने उनकी-मूर्छा दूर हटाई।
माँ बेटी दोनों ही बैठी-आँसू रही बहाई जी ।।२४३।।

शान्त हुआ आवेश हृदय का मां को हुआ विचार।
अब दायित्व निभाना मुझको आया घर का भार जी ।।२४४।।

इस घटना से पद्मा हो गई, गुम सुम चित्राकार।
नहीं किसी से बोले चाले नहीं हंसी खुशहाल जी ।।२४५।।

माँ के खूब मनाने पर भी कुछ कर लेती आहार।
वरना उसकी भूख प्यास थी रूठ गई इस बार जी ॥२४६॥

पद्मा की यह दशा देख मां मन में अति दुख पावे।
किन्तु कुछ भी उपाय उसके नहीं समझ में आवे जी ॥२४७॥

कृत कर्मों को याद करे नित विह्वल मन जो जाय।
ऐसे में दो सती गोचरी लेने तस घर आय जी ॥२४८॥

शोक पूर्ण लख दशा उन्हों की करुणा दिल में आई।
क्या कारण ? तब माता ने सब घटना दी बतलाई जी ॥२४९॥

मधुर शब्द में तभी साध्वियाँ पद्मा को समझाय।
रोने से कुछ लाभ नहीं है, उल्टे कर्म बंधाय जी ॥२५०॥

बालापन में हुई भूल यह रोने से नहीं मिटती।
महा भयंकर फल पाया है, कर्मरेख नहीं कटती जी ॥२५१॥

शोक तजो, कर्तव्य संभालो, हुआ उसे विसराओ।
समझदार हो माँ के दुःख को अब तुरंत मिटाओ जी ॥२५२॥

साध्वी शब्द से पाकर शान्ती, पद्मा ने सिर नाया।
घोर हुआ अपराध मेरे से अहो निशि दिल दुख पाया जी ॥२५३॥

आग लगाई घर में मैंने झूंठा कलंक चढ़ाया।
यही दुःख मेरे मानस को करता ताप सवाया जी ॥२५४॥

धर्म शरण यदि ग्रहण करो तो तुमको शांति मिलेगी।
श्रद्धा से नवकार जपो तो जीवन कली खिलेगी जी ॥२५५॥

सत्संगति में आने से ही कल्मष दूर नसावे।
इतनी बात समझाकर सतियां निज स्थान सिधावे जी ॥२५६॥

पद्मा को ये सारी बातें जंची हृदय हुलसावे।
प्रतिदिन माता पुत्री दोनों धर्म स्थान में आवे जी ॥२५७॥

प्रवचन सुनकर दोनों का ही चित्त शांत हो जावे।
सुता संग माता के मन में धर्म रुचि बढ़ जावे जी ॥२५८॥

गुरुणी जी से कहे एक दिन जग झूंठा दिखलाय।
नहीं हमारा कोई जग में, संयम मन को भाय जी ॥२५९॥

सुनकर गुरुणी सोचे मन में अभी अवसर है नांही।
श्रमणाचार पालना इनका कठिन रहा दिखलाई जी ॥२६०॥

गुरुणी जी कहें अभी तुम्हें, है श्रीकांत की आश।
इनसे मोह तुम्हारा पूरा, प्यारा है गुण रास जी ॥२६१॥

संयम पालन करते तुमको होगा सदा विचार।
अतः अणु व्रत धार प्रेम से पालो श्रावकाचार ।।२६२।।

सुनकर दोनों सोचे मन में, गुरुणी सच फरमाय।
श्रावक के व्रत धारण करके पाले मन वच काय जी ।।२६३।।

उधर मंजुला पास भूपती जयशेखर यों बोला।
अनुनय करते हुए मास छह फिर भी कान न खोला जी ।।२६४।।

किसी बात की हद होती है करो प्रणय स्वीकार।
बार-बार कर रहा विनय यों जयशेखर भूपार जी ।।२६५।।

कहे मंजुला मैं भी आपसे अर्ज करूं हर बार।
मुक्त करो महलों से मुझको, केई आपके नार जी ।।२६६।।

कितनी भी मजबूत रहो तुम, मैं छोड़ूंगा नांही।
अपनी हठ दो छोड़ जगत में त्रिया हठी कहलाई जी ।।२६७।।

हे राजन! मशहूर राजहठ उसे छोड़ दो आप।
डाली सकती टूट परन्तु नहीं झुकेगी साफ जी ।।२६८।।

यह सुनते हो खींज गया नृप, यह कैसी है नार।
कई तरह से मना चुका हूं, कठोर दिल अनपार जी ।।२६९।।

छह महीने में स्पर्श दूर है, जान न पाया नाम।
सिवा सुन्दरी 'कुछ नहीं' जाना, खोया वक्त तमाम जी ।।२७०।।

कई वक्त मैं सोच के आया, करलूं जबरन काम।
किन्तु यहां सन्मुख आते ही होता चक्का जाम जी ।।२७१।।

बड़े-बड़े रणवीर पुरुष भी नारी लख चकराय।
शेरों के वश करने वाले यहां गीदड़ बन जाय जी ।।२७२।।

जयशेखर भी आज हृदय में, दृढ़ निश्चय कर आया।
चाहे जैसे उसे मना कर-कर लूं मन का चाया जी ।।२७३।।

आकर उसने सती सामने रक्खे लोभ अनेक।
किन्तु सबको ठुकरा दीना माना नहीं है एक जी ।।२७४।।

सब पर आज्ञा मेरी चलती, मैं हूं तेरा दास।
काम वासना कहां ले जाती गुलाम बन रहा खास जी ।।२७५।।

मेरे दास क्यों बनते राजन! बनो ईश के दास।
जिससे जीवन सुधरे और होगा कर्म विनाश जी ।।२७६।।

बस-बस! रहने दे शिक्षा को, नृप कहे जोश भराय।
ऐसे कई उपदेश सुने हैं, क्या मुझको समझाय जी ।।२७७।।

सुनो सुन्दरी एक सप्ताह का समय दे रहा श्रौर।
फिर तो सब मर्यादा तोड़कर अपना लूंगा जोर जी ॥२७८॥

इतनी कहकर बात भूपति पैर पटकता जाय।
आज जोश की बात श्रवण कर सती गई घबराय जी ॥२७९॥

छह महीने तक शील धर्म की रक्षा की हर बार।
अब भी रक्षा सही करूंगी, चाहे प्राण हो छार जी ॥२८०॥

कई दिनों से भग जाने का, कर रही खूब प्रयास।
किन्तु साथ नहीं मिली दासियां फली न मेरी आस जी ॥२८१॥

महारागियों से थी आशा, देंगी वे सहयोग।
वे भी केवल बातें करती अहो कर्म का भोग जी ॥२८२॥

महीपति के भय से कोई करता नहीं सहाय।
मरने का भी यत्न किया पर, पहरा कड़ा दिखाया जी ॥२८३॥

विष के लिए कहा दासी से दिया न उसने ध्यान।
सभी ओर से निराश हो गई रखो प्रभो ! मुझ शान जी ॥२८४॥

अन्न पान को त्याग दिया और जपे मंत्र नवकार।
पांच दिवस यों निकाल दीने एकाग्रह मन धार जी ॥२८५॥

सच्चे दिल से करी प्रार्थना कभी न निष्फल जाय।
श्रद्धा हो मजबूत अगर तो मिले सफलता आय जी ॥२८६॥

छट्ठे दिन जब जयशेखर नृप राजसभा में आया।
उसी समय आकर प्रतिहारी ऐसा विनय सुनाया जी ॥२८७॥

सीमा रक्षक खड़े द्वार पर दर्शन करना चाहे।
शीघ्र सभा में लाओ उनको, नृप आज्ञा फरमाये जी ॥२८८॥

देख सभा में सीमान्तों को नृप अवाक् रह जाय।
फटे वस्त्र हैं दीन बदन हैं रहा हृदय घबराय जी ॥२८९॥

सभी अधोमुख होकर बोले शरण आपकी आये।
तभी भूप ने पूछा मुझको कारण स्पष्ट बतायें जी ॥२९०॥

हे राजन ! हमको तुम जानो, पूर्व सीम के रक्षक।
भील भूप आ युद्ध कर रहा बना हमारा भक्षक जी ॥२९१॥

सेनानायक मरा युद्ध में हम सब हो गये दीन।
बड़ी वीरता से लड़ते पर हो गये साधन हीन जी ॥२९२॥

छुप करके हम आये आपको सूचित करने आज।
सीमा का सब क्षेत्र दबाकर कर रहा वहां पर राज जी ॥२९३॥

यह सुन कोपाविष्ट भूप ने सेनापति बुलवाया।
सेना को तैयार कीजिए, यह आदेश सुनाया जी ॥२९४॥

विशाल सेना को लेकर संग में, भूपति हुआ रवाना।
चैन मिली मंजुला सती को, सुन राजा को जाना जी ॥२९५॥

यह प्रभाव है महामंत्र का सती ने मन में माना।
इसी छन्द से काम बनेगा, ऐसा निश्चय ठाना जी ॥२९६॥

वहां पहुंच कर नृप ने कीनी, लड़ने की तैयारी।
भील भूप बलवान न इतना फिर क्यों सेना हारी जी ॥२९७॥

शक्तिहीन होने पर भी नहीं करे हार स्वीकार।
अधिकृत भूमि को भी वह नहीं देने को तैयार जी ॥२९८॥

भील सेना ने गुरिल्लयुद्ध की रीति ली अपनाय।
लूट मारकर रात्रि मांही जंगल में छिप जाय जी ॥२९९॥

उसकी कुटिल चाल के पीछे, जयशेखर की सेना।
हतप्रभ होकर लड़ नहीं पाती, कैसे लोहा लेना जी ॥३००॥

जयशेखर ने सेनापति को, पास बुलाकर अपने।
करें मंत्रणा कैसे जीते, कैसे सफल हो सपने जी ॥३०१॥

सेनापति कहे सारे सैनिक इस जंगल में जावें।
शत्रुदल का करी सफाया वापिस यहां पर आवें जी ॥३०२॥

अलग-अलग तब सैनिक टुकड़ी गई जंगलों मांही।
किन्तु बिहड़ जंगल में जाकर, फंस गये सभी सिपाही जी ॥३०३॥

कितनों ने ही भूख प्यास से दीने प्राण गंवायी।
कितनों का शत्रु सेना ने किया सफाया आई जी ॥३०४॥

कोई भी नहीं शेष रहा जो, पुनः सूचना लावे।
बहुत दिनों तक इन्तजार की, लौट न कोई आवे जी ॥३०५॥

शत्रु का उत्पात रहा बढ़, नृप मन दुःख पावे।
सेनापति से करी मंत्रणा कैसे काम बनावे जी ॥३०६॥

सेनापति कहे वन कटवा दो, शत्रु छिप नहीं पावे।
किंतु काम यह कठिन बतावे, कोई न करना चावे जी ॥३०७॥

सेनानायक कहे लगा दो आग भस्म हो जावे।
पर वर्षा हो रही जोर से, काम न बनने पावे जी ॥३०८॥

प्रकृति भी विपरीत हो गई बरसे मूसलधार।
दोनों ओर से हो रही हानि, भूपति करे विचार जी ॥३०९॥

शत्रु सैन्य से सैनिक मर रहे, लूट शस्त्र ले जाय।
इन दोनों हानि को लखकर नृप विह्वल हो जाय जी ॥३१०॥
जयशेखर ने रक्षा हित सन्धि की बात चलाई।
भील भूप ने सन्धि में इक अपनी शर्त बताई जी ॥३११॥
जो भूमि आधीन मेरे मैं उसका हूं अधिकारी।
यह होवे मंजूर आपको संधि लूं स्वीकारी जी ॥३१२॥
जयशेखर सोचे यों मेरी हार साफ दिखलाय।
लड़कर के भी जीत न पाऊं, शर्त लेऊं अपनाय जी ॥३१३॥
शत्रु शर्त को आखिर उसने कर लीनी स्वीकार।
किंतु इस सन्धि से नृप को लज्जा हुई अपार जी ॥३१४॥
शांति हुई तब सोचे सब ही, पहुंचे अपने स्थान।
किन्तु मार्ग अवरुद्ध हो गये, वर्षा पड़े महान जी ॥३१५॥
यह अपमान हुआ भूपति का, उसमें कारण एक।
लोग परस्पर बातें करते, नृप की नियत न नेक जी ॥३१६॥
शीलवती गुणवती सती को नृप ने रक्खी रोक।
उसके कारण ही भूपति पर आ रहे कष्ट रु शोक जी ॥३१७॥
मार्ग साफ जब हुआ भूप ने सत्वर किया प्रयाण।
नृप के पहले बात पहुंच गई अपयश हुआ महान जी ॥३१८॥
अन्तःपुर में सती मंजुला सुन मन में हरसाय।
मुझे सताया उसका ही फल-दुःख अपयश वे पाय जी ॥३१९॥
एक भील के आगे क्षत्री माने अपनी हार।
भूमि और प्रतिष्ठा खोई है लाखों धिक्कार जी ॥३२०॥
अबला को सन्तप्त किया सो उसका फल वह पाया।
मुझे खुशी है इस खबरी से बढ़ गया खून सवाया जी ॥३२१॥
तत्क्षण भाव बदल गये उसके मैंने यह क्या सोचा।
पर दुःख को सुख मान पाप से हृदय बनाया ओछा जी ॥३२२॥
जैन धर्म की मैं उपासिका जीतूं रागद्वेष।
किंतु छोड़ समभाव आज मैं बढ़ा रही भवक्लेश जी ॥३२३॥
यही सोच समभाव धार कर जपे मंत्र नवकार।
शान्त चित्त हो ध्यान मग्न हो छोड़े सभी विकार जी ॥३२४॥
पहर रात जाते ही राजा सती पास में आया।
भांति-भांति के मधुर शब्द से उसको ललचाया जी ॥३२५॥

आँख उठाकर सती न देखे जब नरपति की ओर।
तब तो पारा चढ़ा भूप का, लगा मचाने शोर जी ॥३२६॥

पहले भी चेताया तुझको अब न सुनूंगा एक।
बलात्कार कर पूर्ण करूंगा अपनी धारी टेक जी ॥३२७॥

ज्यों ही आगे बढ़ा सिंह जी कहे नराधम ठहर।
अनर्थ होगा तन छूने से भरा है इसमें जहर जी ॥३२८॥

धमकी का फल पाया अपयश हुई भील से हार।
अब यदि आगे बढ़ा तो समझो पहुंचेगा यमद्वार जी ॥३२९॥

इन शब्दों से कांप उठा तब पापात्मा भूपाल।
बलात् भावना तज कर वहां से चला गया तत्काल जी ॥३३०॥

नृप जाते ही सती मंजुला, जाप जपे नवकार।
यही कष्ट से पार करेगा, आस्था अपरम्पार जी ॥३३१॥

पनिहारी घट को नहीं भूले, नट नहीं भूले रास।
पति दर्शन की लगी लालसा, सफल होय कब आस जी ॥३३२॥

श्रीकांत भी घूम रहा है कहीं सती मिल जाय।
नगर-नगर और ग्राम-ग्राम में पूछ रहा है प्राय जी ॥३३३॥

नहीं मिलने पर खोटी शंका, उसके मन में आय।
सर सरिता में गिरी कहीं या वन्य-पशु गये खाय जी ॥३३४॥

पर आत्मा कहती है मुझको जिन्दा मिलसी प्यारी।
इसी आश से ढूंढ रहा है घूम-घूम पदचारी जी ॥३३५॥

वन में भ्रमते मिला सार्थपति, देख गया पहचान।
फटे वस्त्र और म्लान बदन लख पूछे दे सम्मान जी ॥३३६॥

कहो मित्र श्रीकांत तुम्हारा क्यों है बदन मलीन।
ऐसा क्यों है हाल तुम्हारा क्यों चिन्ता में लीन जी ॥३३७॥

श्रीकांत बोला यों भैय्या कर्मों का खेल।
इसने ही सब नाच नचाया दीना दुःख में ठेल जी ॥३३८॥

उत्तर सुनकर सार्थवाह ने कहा उसे सप्रेम।
चलो साथ में रहो मौज में करते कुशल रु क्षेम जी ॥३३९॥

श्रीकांत कहे रहूं अकेला चलूं नहीं मैं संग।
समझाया तब सार्थ पति ने, सुने यहां का ढंग जी ॥३४०॥

यह जंगल है महा भयंकर हिंस्र जन्तु खा जाय।
अतः नहीं जाने दूंगा मैं एकाकी वन मांय जी ॥३४१॥

जहां आप जाना चाहोगे, वहां दूंगा पहुंचाय।
समझा उसको लिया साथ में फिर आगे बढ़ जाय जी ॥३४२॥

आगे बढ़ते भील पल्ली के पास सभी आ जावे।
वहीं डाल कर डेरा ठहरे, भोजन में लग जावे जी ॥३४३॥

भीलों ने जा पल्ली पति को सारा हाल सुनाया।
धनपति नामा सार्थवाह ने डेरा यहां लगाया जी ॥३४४॥

अस्त्र-शस्त्र को सजा सभी जन शीघ्र यहां से जाओ।
पल्लीपति ने कहा सभी को लूट कैद कर लाओ जी ॥३४५॥

भीलों ने जाकर धन लूटा, पकड़ सभी को लाये।
श्रीकांत भी उन्हीं साथ में बन्धन में फंस जावे जी ॥३४६॥

बन्दीगृह में श्रीकांत नित जपे मंत्र नवकार।
सब सुख दाता मंत्र यही है, है इसका आधार जी ॥३४७॥

एक दिन देखा श्रीकांत ने हैं सब भील उदास।
क्या संकट है इन पर ऐसा क्या पाने की आस जी ॥३४८॥

पहरेदार से पूछा कारण, चिन्तित क्यों हैं सारे।
भेद सभी बतलादे मुझको श्रीकांत उच्चारे जी ॥३४९॥

मत पूछो नहीं सार है इसमें कहता पहरेदार।
श्रीकांत कहे कहने से ही, होवेगा निस्तार जी ॥३५०॥

ना मानो तो सुनो यहां का एक ही राजकुमार।
पिशाच जिसको लगा कह रहा ले जाऊंगा लार जी ॥३५१॥

वही पिशाच आ गया देह में, उनको रहा सताय।
यह सुनकर श्रीकान्त हृदय में करुणा भर कर आय जी ॥३५२॥

पहले कभी किसी से इसका करवाया उपचार।
कहे सिपाही, कई मनाये देव देवियां लार जी ॥३५३॥

नर बलि भी कर दीनी केई तांत्रिक मांत्रिक आये।
किंतु नहीं उपचार हुआ कुछ हो हताश सब जाये जी ॥३५४॥

अब तो वह स्वतन्त्र हो गया चले न कोई जोर।
इसीलिए सब सुस्त हो गये, छाया दुःख चहुं ओर जी ॥३५५॥

श्रीकांत कहे आप कहो तो मैं भी करूं उपाय।
बड़े-बड़े आ गये यहां पर आप करें क्या जाय जी ॥३५६॥

लाभ नहीं मेरे जाने से तो हानि भी नांही।
अतः आप यह बात सुना दो पल्लीपति को जाई जी ॥३५७॥

जाकर वहां सिपाही ने तब, पल्लीपति फरमाय।
आश नहीं पर लेकर आओ लाने में क्या जाय जी ॥३५८॥

किसी तरह उपचार लगे तो राज्य मेरा रह जाय।
तभी सिपाही लेकर उसको भूप पास में आय जी ॥३५९॥

श्रीकान्त को पल्लीपति ले पुत्र पास पहुंचाय।
पिशाच उसको कष्ट दे रहा, देखे बैठा राय जी ॥३६०॥

भूप कहे क्या-क्या सामग्री चाहें पूजा मांही।
एकान्त स्थान के सिवा मुझे तो चाहे कुछ भी नांहीं जी ॥३६१॥

आप सभी दूर हो जावें, शोर न होने पाय।
दूर गये सब मौन हो गये, देखे ध्यान लगाय जी ॥३६२॥

बिन सामग्री की विधि हमने कहीं नहीं सुन पाई।
नृप सोचे यह क्या करता है, शंका हिये दबाई जी ॥३६३॥

वह तो भूमि पूज बैठ गया, राजकंवर के पास।
मन वच काया वश में करके मंत्र जपे गुणरास जी ॥३६४॥

देख रहे सब उत्सुकता से खड़े-खड़े नर नार।
मंत्र प्रभावे पिशाच जोर से चिल्लाया उस वार जी ॥३६५॥

रोको मंत्र को रोको मंत्र को, प्रेत रहा दरसाय।
जाने दो, मत रोको मुझको दुःख रहा हूं पाय जी ॥३६६॥

मंत्र जाप चल रहा उधर वह प्रेत दीन हो जाय।
भिक्षा मांगू रोको इसको नहीं आऊं तन मांय जी ॥३६७॥

आकर कोई समझा दो, इसको जाप बन्द करवाओ।
चला जाऊंगा, चला जाऊंगा अब भय रती न खाओ जी ॥३६८॥

श्रीकांत का जाप पूर्ण हुआ, पड़ा चरण में आय।
गिड़गिड़ा कर प्रेत कह रहा, अब आज्ञा फरमाय जी ॥३६९॥

अमोघ शक्ति है महामंत्र की बिन आज्ञा नहीं जाय।
कठिन हो रहा रुकना उसका, प्रेत रहा दुःख पाय जी ॥३७०॥

जाप पूर्ण कर श्रीकांत ने पूछा उसको ऐसे।
बीती घटना मुझे सुनाओ, कष्ट दे रहा कैसे जी ॥३७१॥

बिन कारण मैं दुःख न देऊं, कीना इन अपकार।
जिसका भी मैं हाल सुना दूं सुनो आप इस वार जी ॥३७२॥

पूर्व जन्म में एक समय मैं जाय रहा वन मांही।
इसने मेरा धन जीवन सब लूट लिया अन्यायी जी ॥३७३॥

अकाल मृत्यु या प्रेत गति में जन्मा हूं मैं आया।
बिन कारण हत्या से मेरे दिल में वैर जगाया जी ।।३७४।।

इसीलिए मैं बदला लेने बार-बार यहां आऊं।
बदला लेकर दुःख अति देकर खूब हृदय हरसाऊं जी ।।३७५।।

श्रीकांत बोला बदले से वैर नहीं मिट पावे।
किन्तु क्षमा को धारो दिल में, वैर विरोध नसावे जी ।।३७६।।

अब जाने की आज्ञा चाहूं, दीजे कृपा कराय।
ऐसे नहीं कुछ करो प्रतिज्ञा, श्रीकांत फरमाय जी ।।३७७।।

फरमाओ क्या करूं प्रतिज्ञा, आज्ञा सिर पर धारूं।
किसी जीव को नहीं सताऊं, वैर विरोध विसारूं जी ।।३७८।।

बोलो ये दो करो प्रतिज्ञा, शांति मिलेगी सुखरी।
कर दोनों संकल्प प्रेत ने, अपनी राह को पकड़ी जी ।।३७९।।

जाते बोला मैं कृतज्ञ हूं, वन्दन बारम्बार।
वैर भाव से बचा लिया और किया बहुत उपकार जी ।।३८०।।

प्रेत गया और भील राज का पुत्र हुआ तैयार।
सारी जनता प्रमुदित हो गई, स्वस्थ देख उस बार जी ।।३८१।।

खड़े सभी जन श्रीकांत की बोले जय जयकार।
भीलराज ने तत्क्षण उसको लीना गोद मंझार जी ।।३८२।।

कोलाहल हो गया शांत तब, श्रीकांत यों बोला।
बन्दीगृह में मुझे ले चलो, मिट गया यहां का रोला जी ।।३८३।।

आर्त स्वर में भीलराज कहे, क्या फरमाते आप।
क्रूर लुटेरे हिंसक हैं हम अवगुण भरे अमाप जी ।।३८४।।

किंतु आप नहीं समझो हमको कृतघ्न और नादान।
किया अनन्त उपकार आपने दीना जीवन दान जी ।।३८५।।

उसका बदला बन्दीगृह हो, भूलो अब वह स्थान।
श्रीकांत कहे साथी जहाँ है, वहीं हमारा स्थान जी ।।३८६।।

भीलराज सब समझ बात को, यों आदेश सुनावे।
मुक्त करो सब बन्दीजन को, सबका चित्त हर्षावे जी ।।३८७।।

साथी लोग जब मुक्त बने तब माना मन आभार।
अब तो सबके जगी तमन्ना पहुंचे निज आगार जी ।।३८८।।

श्रीकान्त कहे भीलराज से जाऊं इनके साथ।
वह बोला हैं सभी मुक्त पर आप नहीं सच बात जी ।।३८९।।

अभी हमारे स्नेह कैद में बन्द पड़े हैं आप।
श्रीकांत कहे स्नेह हमारा कैसे रहता साफ जी ।।३९०।।

सभी हमारा माल लूटकर रखा तुम्हारे पास।
कैसे स्नेह रहे आपस में, सोचो दिल में खास जी ।।३९१।।

उस ही क्षण सब धन लौटाया, हर्षा हृदय अपार।
भीलों को आदेश दिया पहुंचाओ सीमा पार जी ।।३९२।।

भीलराज ने पल्ली के सब लोगों को बुलवाय।
अभिनन्दन कर श्रीकांत की, कृतज्ञता प्रकटाय जी ।।३९३।।

भीलराज कहे नहीं योग्य मैं फिर भी है अरदास।
दिल की इच्छा मुझे बताओ पूर्ण करूँगा खास जी ।।३९४।।

उचित समय लख श्रीकांत ने इच्छा दी बतलाय।
हिंसा का कटु फल यह देखा, पुत्र रहा दुःख पाय जी ।।३९५।।

देवी देव या दानव मानव कोई न होय सहायी।
अतः आज से हिंसा छोड़ो, दया धर्म सुखदायी जी ।।३९६।।

भीलराज कुछ सोच, बाद में कहे सही फरमान।
बिना सताये किंतु हमको कौन देत धन आन जी ।।३९७।।

फिर कैसे परिवार पलेगा होगी पेट भराई।
श्रीकांत कहे फिक्र न करिये, न्याय नीति बतलाई जी ।।३९८।।

कृषि कर्म और शिल्पकला से अपना काम चलाओ।
हिंसा फल को देख चुके हो, दया धर्म अपनाओ जी ।।३९९।।

सब लोगों के बात जम गई, यह सच्ची दरसाय।
अतः सभी ने स्वीकृत करके यों संकल्प सुनाय जी ।।४००।।

लूटपाट चोरी व्यभिचारी हिंसा रहे हैं त्याग।
न्याय पूर्ण करके हम धन्धा, पेट भरें महाभाग जी ।।४०१।।

भीलराज ने वचन दे दिया, पालूँ प्रण दे प्राण।
चाहे जितना कष्ट पड़े पर तोड़ूं नहीं यह आण जी ।।४०२।।

श्रीकाँत ने अपने श्रम को, सफल गिना उस बार।
चोर पल्ली को न्याय पल्ली लख, हरसे सब नर नार जी ।।४०३।।

पल्लीपति के अति आग्रह से कुछ दिन और रुकाया।
आखिर इक दिन श्रीकांत कहे, जाने का दिल चाया जी ।।४०४।।

अभी बिराजो, सत्संगति दो, पल्लीपति दरसाय।
धर्म वीज जो बोया उसको जमने दो दिल मांय जी ।।४०५।।

श्रीकान्त कहे काम जरूरी अतः यहाँ से जाऊँ जी।
सती मंजुला याद आ रही, कब उससे मिल पाऊं जी ॥४०६॥

ऐसा क्या है काम जरूरी आप हमें फरमावें।
डेढ़ वर्ष हो गये बहिन माँ एकाकी अकुलावें ॥४०७॥

पल्ली पति ने जाने की तब स्वीकृति दी फरमाय।
कहाँ जाना है ? श्रीकान्तपुर ! वह तो दूर बताय जी ॥४०८॥

मार्ग भयंकर हिंसक पशु और डाकू चोर सवाया।
अतः ठहरिये घर में जाकर, उठा पोटली लाया जी ॥४०९॥

श्रीकान्त के कर में देकर भीलराज समझावें।
ये जंगल की जड़ी बूटियां, काम हमारे आवें जी ॥४१०॥

जिसको थोड़ी दवा पिलादें, बेहोशी आ जावे।
किन्तु अब यह दवा हमारे तनिक काम नहीं आवे जी ॥४११॥

हमने सब पापों को छोड़ा, अतः आप ले जावें।
समय पड़े तब इसे आप ही, अपने काम में लावें जी ॥४१२॥

श्रीकान्त हंस कर के बोला, यह क्या करते आप।
काम आपका मुझे दे रहे, मुझको करिये माफ जी ॥४१३॥

ना ना ऐसी बात नहीं है यह नहीं सोचें आप।
जीवन है अवसर आवे गुण सुन लीजे साफ जी ॥४१४॥

पीने से तो एक पहर और सूघे तो घड़ी दोय।
उड़े हवा में एक घड़ी तक—होश सभी दे खोय जी ॥४१५॥

इसीलिए दे रहा तुम्हें यह, पास न रहे हमारे।
कभी पुरानी वृत्ति उमड़ कर, कहीं पतन कर डारे जी ॥४१६॥

एकाकी जा रहे मार्ग में, दवा सहायी थावे।
अतः आप ले जावें इसको, शंका कुछ नहीं लावें जी ॥४१७॥

दवा कदाचित् काम न आवे तो सुनिये इक बात।
अर्ध वैद्य को कभी न देना, देना सिद्ध के हाथ जी ॥४१८॥

अति आग्रह से दवा साथ ली, मोहरें केई हजार।
भीलराज ने दई भेंटणा, गद् गद् हुआ अपार जी ॥४१९॥

चन्द्र कान्तपुर की सीमा तक, खुद पहुँचाने आया।
लगा लौट ने भील भूप तब, नयनों नीर भराया जी ॥४२०॥

महाभाग ! जा रहे आप अब दर्शन देना आप।
नहि भूलूँ उपकार आपका, रक्खूँ हिय के माँय जी ॥४२१॥

भीलराज अपने घर लौटा, बढ़ा उधर श्रीकान्त।
चन्द्रकान्तपुर में वह पहुँचा, खोज रहा हो शान्त जी ।।४२२।।

स्थान-२ को खोज लिया पर, कहीं पता नहीं पाया।
राजमार्ग में जाते इक दिन, राजमहल दिखलाया जी ।।४२३।।

महल गोखड़े नारी रोती, दीख पड़ी है एक।
सती मंजुला जैसा चेहरा लगता इसका नेक जी ।।४२४।।

कुछ क्षण रुक कर देखा निश्चय, वही मंजुला नार।
उधर मंजुला ने भी देखा ये मेरे भरतार जी ।।४२५।।

जान गये आपस में दोनों, देखे दृष्टि लगाय।
किन्तु मंजुला सोचे मन में-पता न कोई पाय जी ।।४२६।।

रुकने का संकेत किया फिर आई महलों माँय।
कैसे पति को पत्र लिखूँ मैं ढूँढा एक उपाय जी ।।४२७।।

निज लोही की स्याही कीनी नख को कलम बनाय।
वस्त्र खंड पर लिखने बैठी मन के भाव सवाय जी ।।४२८।।

दासी की हे नाथ ! वन्दना सविनय हो स्वीकार।
दर्शन से जो खुशी हुई है उसका नहिं है पार जी ।।४२९।।

अधुना नृप के बन्धन में हूं कीने केई उपाय।
किन्तु मुक्त नही होने पाई, घबराई दिल मांय जी ।।४३०।।

छूट सकूँ इसके पंजे से, ऐसा करिये काम।
वक्त नही ज्यादा लिखने का, दासी करे प्रणाम जी ।।४३१।।

कपड़े में कंकर को बांधी, डाल दिया तत्काल।
उठा उसे श्रीकान्त एकान्ते पढ़ता है सब हाल जी ।।४३२।।

पढ़कर चिंता छाई मन में-कैसे इसे छुड़ाऊं।
कार्य निरापद होवे ऐसा सोच उपाय बनाऊँ जी ।।४३३।।

रिश्वत देकर दास दासी को, अपने लेऊँ बनाय।
फिर सोचे यदि जाहिर होवे काम न बनने पाय जी ।।४३४।।

दोनों पर आफत आ जावे पड़े कष्ट में प्राण।
कौन यहाँ पर सुने हमारी, कौन करे फिर त्राण जी ।।४३५।।

सबसे अच्छा है उपाय यह-साधु वेश लूँ धार।
निर्लोभी बन इन्हें दिखाऊँ अच्छे चमत्कार जी ।।४३६।।

श्रीकान्त साधु बन करके बैठा बाग में आय।
तरह-तरह के दिखा करिश्मे, लोगों को बहकाय जी ।।४३७।।

लोगों की वहां भीड़ जमी है, बोले जय जयकार।
ऐसे संत अनोखे जिनकी महिमा अपरम्पार जी ।।४३८।।

चमत्कार को नमस्कार है, ये निर्लोभी सन्त।
सारे पुर में फैली वारता, आते लोग धर खन्त जी ।।४३९।।

जयशेखर ने सुनी बात तब, मन में आनन्द पाया।
मैं भी सेवा साधूँ इनकी, हो जावे मन चाया जी ।।४४०।।

कई उपाय कर चुका तथापि सुन्दरी वश नाहि आई।
अगर सन्त से काम बने तो, सेवा हो फलदाई जी ।।४४१।।

आशा धर कर अर्ध निशा में गया सन्त के पास।
अभी आप कैसे आये हो, कौन बात है खास जी ।।४४२।।

वक्त हमारा प्रभु भजने का अतः महल को जाओ।
भूप कहे मम सुनो प्रार्थना हमको मत ठुकराओ जी ।।४४३।।

सन्त कहे क्या मुझे सुनाता मैं मन की सब जानूं।
तेरी चिंता का कारण इक नारी जात को मानूं जी ।।४४४।।

यह चिंता भी मिट जायेगी ऐसा मैंने जाना।
ऐसा सुनते ही भूपति का हो गया शीश झुकाना जी ।।४४५।।

हे भगवन् ! यह चिंता मेरी कब कैसे मिट जासी।
दीन दयालो ! मुझे बतादो कब वह वश में आसी जी ।।४४६।।

साधु बोला सुनो भूपते ! इसका एक उपाय।
या तो उसको यहां पर लाओ या मुझको ले जाय जी ।।४४७।।

इतना कहकर आँखें मीच ली, मौन हुआ तत्काल।
भूप प्रार्थना करता रह गया कौन सुने अब हाल जी ।।४४८।।

दिवस दूसरे प्रातः भूपति ले सुभटों को साथ।
करी प्रार्थना पवित्र करिये, अन्तःपुर को नाथ जी ।।४४९।।

सन्तों का क्या काम महल में उपवन ही सुखकार।
भूप कहे श्री मुख से वहां पर होगा धर्म प्रचार जी ।।४५०।।

प्रथम कार्य सन्तों का होता करना धर्म प्रचार।
अतः वहां चलने की राजन विनती है स्वीकार जी ।।४५१।।

ससम्मान महल ले जाता, जनता लख हरसाई।
सत्सेवा में लगे भूप को, दे रही खूब बधाई जी ।।४५२।।

राजा भी सुन महिमा अपनी, फूला नहीं समाया।
आज आश फल जायेगी यों भाव हृदय में आया जी ।।४५३।।

सती मंजुला पास संत को दिया शीघ्र पहुंचाय।
किया इशारा यह नारी है, वश में इसे कराय जी ।।४५४।।

कुछ क्षण आँखें मींच सन्त ने, फिर दीनी है खोल।
सबको बाहर कर दो ऐसा राजन ! तुम दो बोल जी ।।४५५।।

नृप की आज्ञा पाते ही सब महल रिक्त कर जांय।
सती हृदय में शंका आई क्यों यह एक रहाय जी ।।४५६।।

कहे मंजुला एकाकी संग पुरुष नहीं रह पावे।
जो कुछ कहना होय आपको साक्षी रख फरमावे जी ।।४५७।।

साधु ने संकेत किया है मत बोले इस बार।
फिर बोला साधु तो सबका मित्र होय सुखकार जी ।।४५८।।

अतः नहीं तुम शंका लाओ ! हम तो रमते राम।
बोली को पहचान सती ने मौन धारली ताम जी ।।४५९।।

राजा सोचे एक बार में इसने वश कर लीनी।
अब तो मेरा काम बनेगा, सच्ची श्रद्धा कीनी जी ।।४६०।।

संत कहे तुम सुनो भूपते ! एक घड़ी तक नार।
यहाँ रहेगी तंत्र मंत्र से होगा सहज सुधार जी ।।४६१।।

कोलाहल से रहित स्थान हो ना कोई रहने पाय।
तभी बनेगा काम आपका सुनलो हे महाराय जी ।।४६२।।

राजा बोला समझ गया मैं अभी यहाँ से जाऊं।
काम बने जो पक्का मेरा तेरा दास कहाऊं जी ।।४६३।।

शांत स्थान लख साधु बोला एक चूर्ण मुझ पास।
मीठे वचन बोलकर अपना काम बनालो खास जी ।।४६४।।

क्रीड़ा हित नृप को ले जाकर देना चूर्ण पिलाय।
एक पहर तक चूर्ण प्रभावे नृप मूच्छित हो जाय जी ।।४६५।।

तभी वहां से खिसक शीघ्र ही उत्तर दिशि आ जावें।
घोड़ा ले तैयार रहूँगा बैठ दोऊ भग जावें जी ।।४६६।।

वात श्रवण कर चूरण मांगा, दीना सन्त निकाल।
फिर दोनों ही मौन हो गये कोई न समझे हाल जी ।।४६७।।

साधु ने तब मंत्रोच्चारण कीना जोर लगाय।
एक घड़ी पूरी होते ही भूप वहां चल आय जी ।।४६८।।

खड़ा-खड़ा वहां सुने मंत्र को सोचे हैं ये सिद्ध।
काम सिद्ध होगा मेरा भी, मिल गये संत प्रसिद्ध जी ।।४६९।।

जाप पूर्ण कर साधु बोला, सुनो भूप महाराय।
पूर्ण साधना हो गई मेरी, मन संतोष रखाय जी ।।४७०।।

थोड़ी देर के बाद आपको प्रत्यक्ष फल मिल जावे।
सुनकर भूपति प्रसन्न होकर, सादर शीश झुकावे जी ।।४७१।।

आभार मानकर थाल असर्फी से भर करके लाया।
विनय सहित रख चरणों मांही, सद्‌गुण मुख से गाया जी ।।४७२।।

थाल असर्फी का लखकर के रोष संत को आया।
राजन् तुमको ज्ञान नहीं है, माया से लिपटाया जी ।।४७३।।

माया त्याग बने हैं साधु, फिर धन रखते पास।
ऐसों का जीवन है विरथा, फले न मन की आस जी ।।४७४।।

यह सुनते ही चरण पकड़कर कहे क्षमा दिलवाय।
मैं नहीं समझ सका, अब समझा आप सिद्ध ऋषिराज जी ।।४७५।।

अभी समझ क्या सके हो राजन ! देखो अब चमत्कार।
जीवन भर तुम याद करोगे, नजर आय संसार जी ।।४७६।।

इतना कह कर संत रवाना हुए भूप पहुंचावे।
भूप लौटकर आतुर होकर, सीधा महल सिधावे जी ।।४७७।।

कामी नर की कभी कामना, शांत नहीं हो पाय।
जयशेखर भी चलकर आया, सती महल के मांय जी ।।४७८।।

आते ही सम्बोधन कीना कहो सुन्दरी बात।
मीठे शब्दों में सती बोली फरमावो अवदात जी ।।४७९।।

नृप ऐसा लख चमत्कार को सोचे संत प्रभाव।
प्रसन्न होकर कहे भूपति क्या है मन के भाव जी ।।४८०।।

सुन्दर आये भाव हृदय में, तिरस्कार नहीं होय।
पूर्व बात को भूल जाइये आगे लेओ जोय जी ।।४८१।।

इतना लख परिवर्तन राजा प्रमुदित हुआ अपार।
चमत्कारी साधु संग से कितना हुआ सुधार जी ।।४८२।।

सती कहे वे संत पुरुष तो थे पूरे अवतार।
मेरी मति को पलट उन्होंने खोल दिये दिल द्वार जी ।।४८३।।

पहले मेरी बुद्धि भ्रमित थी अतः किया तिरस्कार।
अब यथार्थ का ज्ञान हो गया, मिटाया मिथ्याचार जी ।।४८४।।

नृप पूछे क्या है यथार्थता सती ने बात बनाई।
दुःखी जनों का दुःख मिटाने जग में नारी जाई जी ।।४८५।।

तब मेरी इच्छा को पूरण करो सुन्दरी आज ।
कहे मंजुला नर में दुर्गुण एक बुरा महाराज जी ।।४८६।।

नर नहीं पूछे कभी नार से क्या है इच्छा तेरी ।
केवल कहता रहता निशदिन यह इच्छा है मेरी जी ।।४८७।।

भूप कहे कब मना किया था, पूछी थी कब तुमने ।
केवल अपनी रटती रहती लो पूछी अब हमने जी ।।४८८।।

अब बोलो क्या चाहे तुमको, जयशेखर तैयार ।
सती कहे मैं पड़ी कैद में क्या इच्छा सरकार जी ।।४८९।।

उसका मन विद्रोह करता है, नहीं समर्पण भाव ।
अतः हृदय की इच्छा का अब, कैसे हो प्रकटाव जी ।।४९०।।

पशु पक्षी भी सदा मानते बन्धन को अति दोष ।
भूप कहे समझा मैं तुमको बन्दीपन से रोष जी ।।४९१।।

लज्जित हूं मैं अब मत बोलो, लो यह देता मुक्ति ।
कल ही करें प्रेम से दोनों वन क्रीड़ा की युक्ति जी ।।४९२।।

कहे मंजुला स्त्री जीतन की कला आज ही आई ।
राजा सुनकर फूल गया अति हृदय गया विकसाई जी ।।४९३।।

भूप हुआ निज महलों में जाने को तैयार ।
कल ही वन क्रीड़ा करनी है, कहे मंजुला नार जी ।।४९४।।

अच्छी याद दिलाई तुमने अभी करूं इन्तजाम ।
इतना कहकर गया भूपति हुआ सती का काम जी ।।४९५।।

प्रातःकाल ले भूप सती को वन क्रीड़ा हित धाया ।
और संग में दास-दासियां अंगरक्षक सुखदाया जी ।।४९६।।

पीछे से महलों में चर्चा, चली परस्पर मांय ।
एक कहे मैं यही समझती मुश्किल कब्जे आय जी ।।४९७।।

कहे दूसरी क्या करती वह, दो-दो वर्ष निकाले ।
आखिर झुकना पड़ा उसे ही बात कहाँ तक टाले जी ।।४९८।।

कहे तीसरी बन्दी सम ही दीना कष्ट अपार ।
फिर भी कितना धैर्य रखी वह कहे चतुर्थी नार जी ।।४९९।।

वह तो हरगिज नहीं मानती राणी पंचमी बोली ।
साधु ने कामण कर दीना उससे झुक गई भोली जी ।।५००।।

इतने में पटराणी आ गई क्या करती हो बात ।
अगर किसी ने कान भर दिये तो रूठेंगे नाथ जी ।।५०१।।

सुनकर समझ गयी हैं सारी सही बात फरमाय ।
बलशाली संपन्न नाथ की आलोचना दुःखदाय जी ॥५०२॥

उधर भूप उपवन के मांही, सती को रहा घुमाय ।
उपवन की सौन्दर्य प्रशंसा, करता नहीं अघाय जी ॥५०३॥

वह भी हाँ में हाँ कर नृप का बढ़ा रही उत्साह ।
सोचे इनको प्यास लगे तो, देऊं दवा पिलाय जी ॥५०४॥

भ्रमते-भ्रमते दोपहरी में लगी भूप को प्यास ।
कहे प्रिये ! विश्राम करें अब कदली कुंज के पास जी ॥५०५॥

सती कहे हो जैसी इच्छा करिये वह महाराय ।
अन्दर जाते ही दासी से ठण्डा जल मंगवाय जी ॥५०६॥

कदली कुंज से बाहर आ सती पात्र लिया कर मांय ।
अवसर लखकर दवा मिला कर नृप को तभी पिलाय जी ॥५०७॥

अल्प समय पश्चात् कहे नृप निद्रा मुझको आय ।
वन क्रीड़ा से हुई थकावट, निद्रा रही सताय जी ॥५०८॥

संज्ञा शून्य हो गया भूप तब दासी को बुलवाय ।
अन्दर कोई न जाने पावे, नृप निद्रा के मांय जी ॥५०९॥

ध्यान रहे कोई शोर न होवे ना कोई अन्दर आवे ।
इतना कहकर सती मंजुला वन में घूमन जावे जी ॥५१०॥

नहीं किसी को कुछ भी शंका चाहे जहां पर घूमे ।
किन्तु सती का जीवन चक्का देखे किस अब घूमे जी ॥५११॥

धीरे-धीरे सती मंजुला आगे बढ़ती जाय ।
दूरे जाकर इत उत देखा कोई नजर नहिं आय जी ॥५१२॥

त्वरित गति से चली अग्र दिया नाथ दिखलाई ।
सजा सजाया अश्व खड़ा है हर्षित हुई मन माँही जी ॥५१३॥

बहुत समय से मिले दम्पति अश्रु बहे अपार ।
फिर पूछे श्रीकांत सती से क्या-क्या बीते हाल जी ॥५१४॥

गर्भस्थ पुत्र की क्या है व्यवस्था दो मुझको बतलाय ।
यह सुनकर के सती मंजुला रोती यों दरसाय जी ॥५१५॥

घर से निकले बाद विपिन में जन्म पुत्र ने पाया ।
उसे वस्त्र में रखकर मैंने वृक्ष शाखा लटकाया जी ॥५१६॥

शुद्धि करने चली सरोवर कर शुद्धि जब निपटी ।
वन गज ने आ मुझे उठाया, दीनी सर में पटकी जी ॥५१७॥

आँखें खुली तब देखा मैंने, हूं महलों के मांही ।
तब से नृप के बन्धन में हूं, पता पुत्र का नांही जी ।।५१८।।

कहाँ गया वह लाल हमारा क्या बतलाऊं हाल ।
इतना कहकर सती मंजुला रोती है बेथाल जी ।।५१९।।

यही दशा है श्रीकांत की पलटा भाग्य अपार ।
सुत मुख देखने की इच्छा थी वह भी हुई असार जी ।।५२०।।

चन्द समय तक दोनों रोये, फिर आया कुछ भान ।
कब तक बैठे यहां रहेंगे होकर के नादान जी ।।५२१।।

प्रिये उठो बैठो घोड़े पर चलो यहां से भाग ।
रुकने से दुःख होगा हमको भूप गया यदि जाग जी ।।५२२।।

यहां से अगर सुरक्षित निकले, पुत्र खोज कर लेंगे ।
पकड़े गये यदि भूप पाश में प्राणों को हर लेंगे जी ।।५२३।।

उचित बात सुन सती मंजुला घोड़े पर चढ़ जाय ।
किंतु चढ़ते पति पद नीचे सर्प एक दब जाय जी ।।५२४।।

दबते सर्प जोश में आया डसा पति पद मांही ।
हाय हाय कह पड़ा भूमि पर तन में गया विष छाई जी ।।५२५।।

नाग देव भी बिल में जाकर झट अदृश्य हो जाय ।
पति के गिरते गिरी मँजुला पृथ्वी तल पर आय जी ।।५२६।।

वज्रपात हो गया सती पर, विलख-विलख दुःख पाय ।
मैं अनाथ हो गई अकेली, इस जंगल के मांय जी ।।५२७।।

लीला अजब कही कर्मों की ना जाने क्या होय ।
कब कैसी आफत आ जावे जान सके ना कोय जी ।।५२८।।

उधर भूप की बेहोशी का मिटने का हुआ टाइम ।
आँखें खोल नजर दौड़ाई नहीं सुन्दरी कायम जी ।।५२९।।

उसने अन्तिम शब्द कहे थे थक गये हो भूपाल ।
कहाँ गयी आ बाहर पूछा दासी से तत्काल जी ।।५३०।।

उत्तर दिशि में गयी सुन्दरी हमने देखा नाथ ।
शायद उपवन में बैठी वह, ले रही आनन्द नाथ जी ।।५३१।।

भूप कहे जल्दी ले आओ, दासी दौड़ी जाय ।
अंगरक्षक भी खोज करें पर कहीं पता नहीं पाय जी ।।५३२।।

आकर नृप को बात सुनाई, ढूंढ लिया सब बाग ।
वह नारी तो धोखा देकर, गयी कहीं पर भाग जी ।।५३३।।

भूपति ला आवेश कहें यों ढूंढो जंगल मांही ।
मिले जहां से पकड़ उसी को रक्खो यहां पर लाई जी ।।५३४।।
पाते ही आदेश अश्व पर चढ़े सन्तरी जाय ।
चारों दिशा में ढूंढ रहे हैं कहीं पता चल पाय जी ।।५३५।।
पति को ले गोदी में बैठी रो रही झारमझार ।
तत्क्षण अश्व टाप को सुनकर मन में हुआ विचार जी ।।५३६।।
इधर पति की दशा हुई यह उधर ढूंढने आये ।
इससे मालूम होता मुझको भूप चेतना पाये जी ।।५३७।।
क्या करना है मुझे यहाँ पर नहीं सहारा कोय ।
अगर गयी पकड़ी तो निश्चय दुरअवस्था मम होय जी ।।५३८।।
अतः यही है उचित मुझे अब जल्दी ही भग जाऊं ।
किन्तु छोड़ कर पति को यहाँ पर कैसे कहाँ सिधाऊं जी ।।५३९।।
सर्प डसा है कुछ दिवसों में हो जावें तैयार ।
अतः अश्व पर रखकर इनको ले जाऊं मैं लार जी ।।५४०।।
घोड़े पर रखने का उसने कीना बहुत उपाय ।
किंतु पति को चढ़ा सकी ना दोनों कर के मांय जी ।।५४१।।
भय से सोचा अभी छोड़ दूं फिर आकर ले जाऊं ।
जान बची तो लाखों पाये अपने प्राण बचाऊं जी ।।५४२।।
इनके पास मुझे देखेंगे, होगी रक्षा नाय ।
पति के प्राणों को लूटेंगे, शील धर्म भी जाय जी ।।५४३।।
राजपुरुष ना इनको जानें अतः छोड़ देवेंगे ।
फिर ले जाकर इन्हें जीवन की नैया को खेवेंगे जी ।।५४४।।
पति की और शील की रक्षा का यह ठीक उपाय ।
समझ चढ़ी घोड़े पर वहां से शीघ्र दूर भग जाय जी ।।५४५।।
अश्व तीर की तरह दौड़ के सीम पार ले जाय ।
आँख मींचकर सती मंजुला गई उस पर चिपकाय जी ।।५४६।।
पता नहीं वह घोड़ा उसको ले जाता किस ओर ।
और किधर को रहा हमारा, प्राण पति सिरमौर जी ।।५४७।।
महा भयंकर अटवी में जा अश्व रुका गति थाम ।
बुरी तरह से श्वास चढ़ रहा, पड़ा भूमि ताम जी ।।५४८।।
करुण भाव से सती मंजुला उसकी ओर निहारे ।
उधर अश्व भी कार्य सिद्धि पर मनस्तोष को धारे जी ।।५४९।।

मौन भाव से कहता सती को भूप पकड़ नहीं पावे।
अतः रहें निश्चित आप तो कभी नहीं घबरावें जी ॥५५०॥
सती मंजुला कृतज्ञता से फेरे हय पर हाथ।
इतने में इक हिचकी लेकर छोड़ गया वह साथ जी ॥५५१॥
निराधार हो गयी मंजुला बह रही अश्रुधार।
पति के तन को लेकर आना कठिन हुआ इस बार जी ॥५५२॥
कितनी दूर कहाँ चल आई नहीं है मुझको ज्ञान।
जाऊं भी तो किधर सिधाऊं करती आरत ध्यान जी ॥५५३॥
निराश होकर गिरती उठती, बढ़ रही आशा धार।
कहीं भाग्य मिला दें हमको, ऐसा हिये विचार जी ॥५५४॥
उधर भूप के अश्वारोही सीमा तक चल आये।
इत उत खोज लगाई गहरी, किन्तु खोज नहीं पाये जी ॥५५५॥
नहीं मिली तब लौट सिपाही भूप पास में आये।
सभी सूचना सुनकर राजा दिल में अति सरमाये जी ॥५५६॥
उसकी दशा हुई है ऐसी, जैसी कृपण की होय।
हाथ लगी अनमोल मणी को छीन ले गया कोय जी ॥५५७॥
आ महलों में दासी जन को, रहा खूब धमकाय।
उसको बेहोशी का चूरण, किसने दीना लाय जी ॥५५८॥
धमकी सुनकर दासी गण ने कर दीना इन्कार।
हमें पता है नहीं नाथ कुछ, कर गयी वो ही नार जी ॥५५९॥
अन्तःपुर भी ऊपर से सब सम्वेदन दरसाय।
किंतु उसके भग जाने से रही हृदय हरसाय जी ॥५६०॥
एक चतुर दासी ने आकर सविनय बात सुनाई।
चमत्कार यह उस साधु का मुझको रहा लखाई जी ॥५६१॥
साधु नहीं वह बहू रूपिया मायावी दिखलाया।
उसके आने बाद नार में, यह परिवर्तन आया जी ॥५६२॥
मालूम होता वह परिचित था सांठ गाँठ की आय।
उसे यहां पर पकड़ मंगावे रहस्य खुलेगा प्राय जी ॥५६३॥
जयशेखर के बात जंची यह दासी सच दरसावे।
बुला भृत्य को कहा शीघ्र ही साधु को यहाँ लावे जी ॥५६४॥
साधु आश्रम पर जा देखा रिक्त पड़ा है स्थान।
बाबाजी तो चले गये हैं लेकर के सामान जी ॥५६५॥

सारे शहर का चप्पा-चप्पा खोज लिया उस बार।
कहीं भी साधु नहीं मिला है हुआ कहाँ पर पार जी ॥५६६॥

आकर नृप को अर्ज सुनाई मिला नहीं है साधू।
कहाँ छिपा भूमि या नभ में कैसा कर गया जादू जी ॥५६७॥

नहीं मिलने से हो गया नृप को यही पूर्ण विश्वास।
दोनों का षड्यन्त्र दीखता मुझको यहां पर खास जी ॥५६८॥

चिड़ियों ने चुग लिया खेत को अब क्या होनी बात।
जयशेखर नृप रहा देखता और मसलता हाथ जी ॥५६९॥

राणी जन भी आपस में अब व्यंग कसे हरसाय।
चमत्कार साधु का देखो, ली सुन्दरी उठाय जी ॥५७०॥

राजा सुनकर इन बातों को पहले रोष भराया।
किन्तु बाद कामान्ध मानवी दिल में अति पछताया जी ॥५७१॥

रावण और पद्मोत्तर जैसे तीन खण्ड के नाथ।
काम वासना ले डूबी यह आगम कहता बात जी ॥५७२॥

उधर देह निश्चेष्ट पड़ा है नहीं सुरक्षा कोय।
अटवी में श्रीकांत शांत है, कैसे रक्षा होय जी ॥५७३॥

चन्द समय के बाद योगियों की टोली चल आई।
मानव का तन देख अचेतन, गये वहीं ठहराई जी ॥५७४॥

आ समीप में देखा उसको, विषधर डंक लगाया।
इस कारण यह पड़ा यहां पर करुण भाव दिल आया जी ॥५७५॥

सर्प दंश की दवा पास में और मंत्र है खास।
फिर भी यह निश्चेष्ट रहे तो क्या करुणा की आश जी ॥५७६॥

अतः गुरु ने मंत्र योग से चमत्कार दिखलाया।
श्रीकांत के तन को निर्विष करके उसे जगाया जी ॥५७७॥

ज्यों ही आँखें खोल देखता योगीराज विराजे।
वह भी सादर नमस्कार कर बैठा गुरु के आगे जी ॥५७८॥

गुरु ने प्रश्न किया है उससे क्या है तेरा नाम ?
कैसे इस अटवी में आये ? कौन तुम्हारा ग्राम जी ॥५७९॥

मैं परदेशी बहुत दूर का है यह परिचय मेरा।
गुरु ने कहा—कहाँ जाओगे ? इसे पुलिस ने घेरा जी ॥५८०॥

तुम लोगों ने देखी सुन्दरी बोले कड़क आवाज।
स्त्री से हमको क्या मतलब है कहते योगीराज जी ॥५८१॥

राज नशे में अश्वारोही शब्द कठोर सुनावे।
हम तो पूछ रहे नारी की उत्तर अन्य दिलावें जी ॥५८२॥

योगी ने भी तीखे स्वर में कहा शिष्टता नांही।
यह सुनते ही नम्र हो गये क्षमा करे महाराई जी ॥५८३॥

चार घड़ी से ढूंढ रहे हैं मिली न हमको नार।
इसी परेशानी के कारण तजी सभ्यता कार जी ॥५८४॥

उसको तो नहीं देखी हमने पर क्यों खोजो नार।
ऐसा उसमें क्या गुण है सो ढूंढे अश्व सवार जी ॥५८५॥

गुण अवगुण का पता न हमको आज्ञा दी महाराय।
दो वर्षों से राज महल में बन्दी तुल्य रहाय जी ॥५८६॥

आज उसे घूमाने को नृप लाये थे उद्यान।
बेहोशी की दवा पीला कर भाग गई शैतान जी ॥५८७॥

सचेत होकर देखा नृप ने नारी नहीं दिखाय।
आज्ञा दी तुम लाओ खोज के तब से रहे फिराय जी ॥५८८॥

नहीं मिली वह तुमको अब तक खोजो आगे जाय।
इतना कहकर योगीराज तो कुछ क्षण मौन रहाय जी ॥५८९॥

अश्वारोही की चर्चा सुन श्रीकांत करे ध्यान।
चारों ओर देखकर सोचा, अश्व गया किस स्थान जी ॥५९०॥

समझ गया वह बैठ अश्व पर चली गई अन्यत्र।
अब मेरा यहां रुकना व्यर्थ है खोज करूं मैं कुत्र जी ॥५९१॥

कहां मंजुला को मैं खोजूँ किस दिशी में वह जाय।
इतने में ही योगीराज ने प्रश्न दिया दोहराय जी ॥५९२॥

अब यहां से परदेशी तुमको कहाँ रवाना होना।
अनायास ही श्रीकांत कहे कहीं पर भी नहीं जाना जी ॥५९३॥

श्रीकांत के शब्द श्रवण कर योगी भी हंस जाय।
गुरु बोले तुम चिंतित क्यों हो कारण स्पष्ट बताय जी ॥५९४॥

योगी कहे धन नष्ट हुआ या नारी रूठी तुमसे।
बार-बार योगीजी पूछे कारण कहदो हमसे जी ॥५९५॥

योगीराज क्या कहूं आपको क्या तुमसे अनदेखा।
कुछ आकर्षण नहीं है जग में मैंने सब विध देखा जी ॥५९६॥

ऐसे विरक्त ही चाहे हमको वे ही शिष्य बन पाय।
परम्परा भी चले इन्हीं से योगीराज दरसाय जी ॥५९७॥

श्रीकांत की बात-चीत अरु देह कांती से गुरुवर।
आकर्षित हो सोचे मन में यह बन जाय शिष्यवर जी ॥५९८॥

मेरा पंथ चलेगा अच्छा शिष्य वृद्धि हो जाय।
राजा सेठ धनपति सबही, आकर्षित हो जाय जी ॥५९९॥

योगीराज कहे निराश मत हो, चलो हमारी लार।
उनके साथी हमको समझो जिसका नहीं संसार जी ॥६००॥

श्रीकांत ने सोचा मन में अच्छा इनका साथ।
फिरूँ अकेला इससे अच्छा, योगी संग अवदात जी ॥६०१॥

मैं भी आपके साथ रहूंगा, श्रीकांत दरसाय।
कुछ तो लाभ मिलेगा मुझको, इसमें शंका नाय जी ॥६०२॥

बोले शिष्य तभी यों मुख से गुरु विद्या भण्डार।
सर्पदंश से तुमको मुक्त किया है जीवन दातार जी ॥६०३॥

योगी संग के साथ रहे नित श्रीकांत मन लाय।
पूर्व शिष्यवत् यह भी गुरु को गुरुजी कह बतलाय जी ॥६०४॥

गुरुजी सोचे नया शिष्य यह योग्य मिला है आय।
श्रीकांत मंजुला खोज का ठीक सहारा पाय जी ॥६०५॥

योगी एक स्थान नहीं रहते ग्राम-ग्राम में जावे।
एक नजर है श्रीकांत की कहीं मंजुला पावे जी ॥६०६॥

विना मंजुला उदास है मन, ज्यों चंदा बिन रात।
गुप्त तरीके कभी किसी से पूंछ लेय अवदात जी ॥६०७॥

भूखी प्यासी भटक रही है मंजुला जंगल मांय।
दिन में चलती निशा समय में तरु नीचे सो जाय जी ॥६०८॥

देव, गुरु का स्मरण करे वह, देह ममता विसराय।
वनचर से भय नहीं रहा वह सोचे यों मन माय जी ॥६०९॥

ये तो केवल प्राण हरे पर, शील हरण भय नांय।
नृप महलों में डरी बहुत वन में निर्भय हो जाय जी ॥६१०॥

वन फल खाकर समय बिताती सर जल प्यास बुझाय।
अवनि तल पर शयन करे अम्बर तल समय बिताय जी ॥६११॥

एक दिन वन में चलते उसको सार्थपति मिल जाय।
जंगल में लख नार अकेली मन में विस्मय पाय जी ॥६१२॥

थोड़ी देर तक रहा सोचता, आया उसके पास।
मधुर शब्द यों बोला भगिनी! जंगल में क्या आश जी ॥६१३॥

पूछे कौन कहां से आई इस जंगल के मांय।
भगिनी सुन विश्वास हुआ वह सार बात बतलाय जी ।।६१४।।

और नहीं मैं हूं दुखियारी भटकूं इस वन मांय।
सार्थपति कहे देख रहा हूं अब कुछ कहना नाय जी ।।६१५।।

बीहड़ बन में रहना अच्छा नहीं सुनो तुम बाई।
अपने घर पर चलो शीघ्र तुम, शंका दूर हटाई जी ।।६१६।।

लगी सोचने मधुर बोलकर पुरुष जाल फैलाय।
फिर अपने दुर्भाव प्रकट कर, दुष्ट क्रूर बन जाय जी ।।६१७।।

"नहीं जाऊं" फिर दूजे क्षण ही आया हृदय विचार।
वन में मुझको पतिदेव के, दर्शन हैं दुष्वार जी ।।६१८।।

अतः छोड़ वन, नगर ग्राम में जाना ही श्रेयकार।
नहीं जाने से संकट आए सोच रही इस वार जी ।।६१९।।

इतने में ही सार्थपति का आग्रह हुआ अपार।
भाई के घर जाने में भी है क्या सोच विचार जी ।।६२०।।

इन वचनों से सार्थ वाह के हुई मंजुला साथ।
आकर सार्थ में दासी जन को बुला सुनाई बात जी ।।६२१।।

पहले इनको स्नान कराओ स्वच्छ वस्त्र पहनाय।
स्नेह और सम्मान साथ में भोजन इन्हें जीमाय जी ।।६२२।।

खान पान से निवृत्त होकर सार्थपति दरसाय।
बहन कहो क्या आई आपद् घूम रही वन माय जी ।।६२३।।

कहने लायक बात होय तो मुझसे नहीं छिपाय।
स्नेह सिक्त सुन वचन मंजुला आंसू रही टपकाय जी ।।६२४।।

आश्वासन दिया बहुत सार्थपति अश्रु नहीं रुक पाय।
गहरी पीड़ा समझ शांति से, ऐसी बात सुनाय जी ।।६२५।।

तुम तो मेरी धर्म बहन हो भाई मुझको मानो।
पवित्रतम है संबंध अपना भाई मुझको जानो जी ।।६२६।।

सार्थपति के इन शब्दों से मिली शांति उस वार।
स्नेह साथ भाई से अहो निश पा रही पूरा प्यार जी ।।६२७।।

चलते-चलते सार्थपति अब पहुंचे अपने शहर।
सेठ आ गये जान सभी में फैली अनुपम लहर जी ।।६२८।।

सार्थपति संग लख औरत को सेठानी शंकाय।
संदेह भरी नजर से लखकर पति से पूछा आय जी ।।६२९।।

कौन आप के संग में आई, परिचय कुछ बतलाय।
यह दुखियारी भटक रही थी, मिली मार्ग के मांय जी ।।६३०।।

आश्वासन दे लाया साथ में सहायक तेरा होय।
एकाकी रहो तुम घर में नहीं दूसरो कोय जी ।।६३१।।

ससंदेह तभी वह बोली क्या मेरे सहारा लाये ?
और बात मत समझो मन में धर्म बहन मन भाये जी ।।६३२।।

पति से बोली आप कहो मैं करूँ सभी स्वीकार।
किंतु मन से तीखा कांटा नहीं निकला इस बार जी ।।६३३।।

सती मंजुला सेठ पत्नि की नजर गई पहचान।
मम जीवन व्यवहार देखकर स्वतः होवेगा भान जी ।।६३४।।

शंका शूल हृदय का तो फिर सहज दूर हो जाय।
अतः शान्त मन काम काज में अपना समय लगाय जी ।।६३५।।

सार्थपति को निज पत्नि के भावों का है ज्ञान।
निज चरित्र पर श्रद्धा पूरी नहीं हो कुछ भी हान जी ।।६३६।।

दिन भर करती काम मंजुला, गृह पत्नी अनुसार।
पति-पुत्र को याद रखे नित गिणे मंत्र नवकार जी ।।६३७।।

रहते रहते बीत गये हैं पूरे अठारह साल।
पति दर्शन कर सकी नहीं अब क्या हैं उनके हाल जी ।।६३८।।

पाप पुण्य का चक्र हमेशा घूम रहा जग मांय।
तीव्र पाप का उदय जीव को महादुःखद हो जाय जी ।।६३९।।

पापोदय से अच्छे काम भी उल्टे फल बतलाय।
साधारण घटना भी महा विपत्ती जनक बन जाय जी।।६४०।।

यही बात मंजुला सती के रही सामने आय।
एक दिवस वह सेठ कहीं से बोरे भर धन लाय जी ।।६४१।।

सेठानी घर मिली नहीं जब देखा अन्दर आय।
पूछा मंजुला कहां गई वह ? पाड़ोसिन घर जाय जी ।।६४२।।

दिन भर रहा देखते बीता शाम तलक नहीं आई।
कहाँ तक करे प्रतीक्षा उसकी आओ तुम ही बाई जी ।।६४३।।

इस धन को हम अन्दर रख दें निशा अंधेरा छाय।
कहे मंजुला बंधव सुनलो अभी भाभी जी आय जी ।।६४४।।

वे ही यहां पर अपने हाथ से रखेंगी संभाल।
मूल्यवान हैं सभी वस्तुएं दीनी बात को टाल जी ।।६४५।।

थका बहुत मैं सार्थपति कहे ना जाने कब आय।
बहुत कीमती चीजें लाया सहज नहीं मिल पाय जी ॥६४६॥
अरक्षित कैसे छोड़ूं, यहाँ आओ हाथ बटाओ।
अन्दर जाकर मैं रख दूंगा, तुम बाहर से लाओ जी ॥६४७॥
भैयाजी के अति आग्रह को बहन सकी नहीं टाल।
सभी वस्तुएं उठा उठाकर रख दीनी संभाल जी ॥६४८॥
हुआ काम पूरा तब दोनों अब बाहर रहे आय।
उसी समय सेठानी जी भी आई घर के मांय जी ॥६४९॥
सेठाणी ने भण्डारे से देखा निकलते साथ।
क्रोधित होकर सोचे मन यह शंका की बात जी ॥६५०॥
अविश्वास हुआ मन में है अनुचित संबंध।
लाल नेत्र कर बोली अन्दर क्या करते मतिमंद जी ॥६५१॥
कहे सेठ धन आदि वस्तुएं अन्दर रखी लाय।
पर नारी से आप अकेले में क्यों काम कराय जी ॥६५२॥
चारित्र पर संदेह होने से सेठ गया झल्लाय।
लाल नेत्र कर बोला कहते जरा शर्म नहीं आय जी ॥६५३॥
तुम तो मेरे पीछे छोड़ घर, कहीं घूमने जाय।
दिन भर करता रहा प्रतीक्षा, नहीं समय पर आय जी ॥६५४॥
रात हो गई अमूल्य चीजें रक्खी भंडारे लाय।
बुरा किया क्या इसने मेरा लीना हाथ बटाय जी ॥६५५॥
अपने कर्तव्यों का तुमसे पालन होता नांय।
दिन भर फिरती पटराणी सम शंका हम पर लाय जी ॥६५६॥
देख पति को कुपित नार ऊपर से शांत हो जाय।
समझ गई इस समय बोलना, अपने लिए दुःखदाय जी ॥६५७॥
किंतु मंजुला प्रति हृदय में प्रतिशोध जग जाय।
मन ही मन में रहे सोचती, कोई एक उपाय जी ॥६५८॥
समयोचित कारज करने में, नारी चतुर कहाय।
सार्थपति पत्नी अब पति के अनुकूल हो जाय जी ॥६५९॥
घर के काम काज में भी वह पूरा ध्यान लगाय।
सेठाणी मंजुला साथ में काम रही करवाय जी ॥६६०॥
दत्तचित्त हो सार्थ वाह की सेवा करे दिन-रात।
पति ने समझा डाट दिखाई उसका फल साक्षात जी ॥६६१॥

स्नेह सहित मंजुला साथ में रहती है धर प्यार ।
दिल में करे विचार प्रेम ही जीवन का सार जी ॥६६२॥
समय मिले तो धर्म ध्यान करती है सति चितलाय ।
एकान्त बैठकर प्रभु स्मरण और करती है स्वाध्याय जी ॥६६३॥
कुछ दिनों पश्चात् सेठ परदेश कमाने जाय ।
सार्थ साथ लेकर के निकला उमंग है मन मांय जी ॥६६४॥
अल्प समय तो रहे देश और अधिक रहे परदेश ।
धन उपार्जन करके लाना यही उसका उद्देश्य जी ॥६६५॥
पति गमन के बाद सेठाणी रखे मधुर व्यवहार ।
शहद लगी तलवार सदृश वह दिखा रही है प्यार जी ॥६६६॥
यदा कदा सेठाणी घर से निकले घूमने काज ।
घर बाहर इसको करना है यह है दिल का राज जी ॥६६७॥
ऐसा कारण रच डालूं यह स्वयं यहां से जाय ।
सांप मरे, लाठी नहीं टूटे ऐसा करु उपाय जी ॥६६८॥
ढोंग रच रही सच्चरित्र का, चरित्र भ्रष्ट हो जाय ।
फिर जग में यह किसी सामने मुख भी नहीं दिखलायजी ॥६६९॥
सेठाणी के रात्त दिवस अब इसी खोज में जाय ।
एक दिन उसको मिला निरापद ऐसा सहज उपाय जी ॥६७०॥
गणिका उसके नजर आ गई फलित हुआ दुर्भाव ।
कंचनपुर में करती है वह नाच गान धर चाव जी ॥६७१॥
युवतीजन के साथ जा रही लेती है विश्राम ।
सेठाणी वहां सद्य पहुंच कर लगी बनाने काम जी ॥६७२॥
इधर-उधर की बातें करते जमी हृदय के माय ।
यदि मंजुला इसको बेचूं अर्थ लाभ हो जाय जी ॥६७३॥
एक पंथ दो काज बने तो नहीं करना संकोच ।
उस घर से फिर कभी निकलने की नहीं सकती सोच जी ॥६७४॥
करके कुछ संकेत दूर से दी मंजुला बताय ।
अनुपम सुन्दरी लख कर गणिका उसको पाना चाय जी ॥६७५॥
मन में मधुर कल्पना करती देवांगना आ जाय ।
इस ललना के कारण मेरा घर धन से भर जाय जी ॥६७६॥
वेश्या बोली ले लो मोहरें जितनी हो तुम चाह ।
सौदा कर मोहरें ले घर पर आई धर उत्साह जी ॥६७७॥

घड़ी बाद वेश्या भी चलकर सार्थ वाह घर आयी।
स्वागत करती, चरण पकड़ती सेठाणी हरषायी जी ॥६७८॥

वर्षों बीत गये मासी जी दर्शन भी नहीं पाये।
आज मार्ग तुम भूल गये क्या इधर किधर से आये जी ॥६७९॥

मस्तक पर रख हाथ मासी जी आशिर्वाद सुनाय।
तभी मंजुला व्यवहार दृष्टि से आकर शीश नमाय जी ॥६८०॥

भूल गये मौसीजी मुझको ऐसी बात सुनाय।
नहीं नहीं बेटी घर धंधे से समय नहीं मिल पाय जी ॥६८१॥

प्रौढ़ावस्था आ गई मेरी, कोई सहारा नाय।
रहूं अकेली घर में बेटी यह खटके दिल मांय जी ॥६८२॥

यह नारी है 'कौन' यहां पर कैसे रहती बाई।
दुखियारी थी घर ले आए इसको बहन बनाई जी ॥६८३॥

घर का सारा काम करे नित बड़ी भली नार।
कभी काम करने मैं बैठूं, कर देती इन्कार जी ॥६८४॥

इनके कारण निश्चिन्त है, मैं दीना सब संभलाय।
जिम्मेदारी रही नहीं कुछ हूं आनंद के मांय जी ॥६८५॥

बड़ी भाग्यशाली हो बेटी पुण्य कमा कर लाई।
ऐसा भाग्य हमारा कहाँ है दीये अश्रु टपकाई जी ॥६८६॥

क्यों निराश होती हो मौसी चिन्ता दूर हटाओ।
धन के तो भंडार भरें हैं जो चाहो सो पाओ जी ॥६८७॥

बात श्रवण कर वेश्या तत्क्षण चिंता में खो जाय।
फिर बोली कुछ मांगू बेटी मना करोगी नाय जी ॥६८८॥

सेठाणी कहे घर है आपका जो चाहो ले जाओ।
अधिकारी है सच आप अपनी इच्छा दरसाओ जी ॥६८९॥

कहने की इच्छा है किन्तु मुझसे कहा न जाय।
कैसी बातें करती, मुझ पर तुम्हें भरोसा नाय जी ॥६९०॥

बहुत सोच कर बोली भेजो इस नारी को साथ।
जब इसकी इच्छा होगी मिलने भेजूं सच बात जी ॥६९१॥

चिंतन कर बोली सेठाणी है मुझको स्वीकार।
इसे पूछलो यदि जावे तो रखना अच्छी सार जी ॥६९२॥

मेरे साथ चलोगी, बेटी पूछ रही धर प्यार।
अपने मन की बात बता, होगा इच्छा अनुसार जी ॥६९३॥

कहे मंजुला नहीं इन्कारी यदि बन्धव आ जाय।
उचित यही मैं चलू साथ में उनसे आज्ञा पाय जी ।।६९४।।

वेश्या बोली है व्यापारी नहीं मालूम कब आय।
कब तक करे प्रतीक्षा कह कर उदास वह हो जाय जी ।।६९५।।

सार्थ पति की पत्नि बोली बहन मंजुला जाओ।
मन नहीं लगे तुम्हारा वहां तो पुःन लौट घर आवो जी ।।६९६।।

वहां जाने पर सार्थ पति को होगी नहीं कोई बाधा।
माता मौसी में क्या अंतर खुश होंगे वे ज्यादा जी ।।६९७।।

पतिदेव फरमावेंगे तो, जल्दी लूं मंगवाय।
हम तुम नहीं पराये होंगे, प्रेम अधिक बढ़ जाय जी ।।६९८।।

जैसी आपकी इच्छा भाभी जाने को तैयार।
गलती की माफी दे देना, पाया यहां पर प्यार जी ।।६९९।।

बन्धव आवे उनसे कहना, क्षमा मुझे बक्षाय।
दिया सहारा रक्षा कीनी गुण का पार न पाय जी ।।७००।।

देखो हमसे स्नेह है कितना, इसके दिल के मांय।
कहते-२ सेठाणी का मानो दिल भर आय जी ।।७०१।।

पितृगृह से मानों आज यह पति गृह को जाय।
वैसी सीख दे रही सबको दुःख वहां नहीं पाय जी ।।७०२।।

बेटी तू चिंता मत करना वहां इतना सुख पाय।
नहीं किसी को याद करेगी, बैठी मौज मनाय जी ।।७०३।।

सरल मंजुला प्रेम भाव से प्रभावित हो जाय।
षड़यन्त्र मेरे साथ रचा है, को वह समझ नहीं पाय जी ।।७०४।।

ठीक कहा है भले मनुज को कोई फंसा ले जाय।
उसमें भी वेश्या के जाल से कोई ही बच पाय जी ।।७०५।।

त्रिया चरित्र को देव न जाने मानव की क्या बात।
बृहस्पति का सारा ज्ञान नारी नख मांहि समात जी ।।७०६।।

संकेत किया वेश्या ने सबको नहीं मार्ग में बोले।
इसको शंका हो नहीं पावे और मानस नहीं डोले जी ।।७०७।।

कंचनपुर में पहुंची मंजुला वेश्या के आवास।
सबसे ऊपर की मंजिल में रखा धर विश्वास जी ।।७०८।।

सुख सुविधा की सामग्री सब वहां पड़ी मिल जाय।
सोच रही वह मासी के घर सम्पन्नता दिखलाय जी ।।७०९।।

कुछ समय पश्चात मंजुला वेश्या को दरसाय।
बिना काम के बैठे मेरा मन कैसे लग पाय जी ।।७१०।।

वेश्या कहे तू बड़े काम की, क्यों चिंता मन लाय।
अभी करो आराम यहां, फिर दूंगी काम बताय जी ।।७११।।

आनन्द पाने मिली जिन्दगी क्यों इतनी घबराय।
ऐसा मिलेगा काम जिसे तू करना मन हरसाय जी ।।७१२।।

यह कह वेश्या हुई रवाना मंजुला शांत हो जाय।
नहीं जाने क्या काम मिलेगा, आनंद से दिवस बिताय जी ।।७१३।।

एक रात वहां नाच गान की आती थी आवाज।
नीचे उतरी पता लगाने क्या है इसका राज जी ।।७१४।।

तबले पर वहां थाप लगा रही—देखे नयन पसार।
घुंघरु बांधे युवतीजन तो नाचे भवन मंझार जी ।।७१५।।

पुष्पा कीर्ण गलीचों पर बैठे थे कामी लोग।
कामोद्दीपक हाव भाव इंद्रिय विषयों का योग जी ।।७१६।।

वाह-वाह की ध्वनि हो रही और कामुक संकेत।
युवती जन कामी लोगों को आकर्षित कर लेत जी ।।७१७।।

खड़ी-खड़ी वह देख रही है वेश्यालय का हाल।
विलासिता में डूबे हैं सब छाया हृदय मलाल जी ।।७१८।।

महफिल में बैठे लोगों की दृष्टि उस पर जाय।
कामी जन यों लगे सोचने अप्सरा कहां से आय जी ।।७१९।।

एक पुरुष साहस कर बोला यहां खड़ी क्यों आप।
बाईजी ने हीरा खोजा, बुद्धि का नहीं माप जी ।।७२०।।

लाखों में है एक नगीना, कब महफिल में आये।
कामीजन तब प्रमुखा जी को ऐसी बात सुनाये जी ।।७२१।।

सुनी बात पर सह न सकी झट उल्टे पैर सिधाय।
अधो मुखी आसन आ बैठी, टप-टप आंसू टपकाय जी ।।७२२।।

एक पुरुष ने कहा चिड़िया तो उड़ी गगन में जाय।
पर यहां आने वाला कोई नहीं निकलने पाय जी ।।७२३।।

कामी जन से वेश्या बोली अभी नई ही आई।
थोड़े दिन में आ पायेगी इस महफिल के मांही जी ।।७२४।।

फिर पूछा क्या कीमत होगी दो हमको बतलाय।
असली हीरा खिला सुमन कोई बड़ा भागी ही पाय जी ।।७२५।।

पहले सोचे थैली हलकी करे वे ही यहां आय।
हलकी की क्या बात कह रही खाली ही कर जाय जी ।।७२६।।

कुछ दिन धीरज रखो आप सब काबू में आ जाय।
अभी नयन पथ गामी होना कठिन काम दिखलाय जी ।।७२७।।

बहुत खोज के बाद यह हीरा मेरे हाथ में आया।
कितनी युक्ति करके मैंने इसको यहां पहुंचाया जी ।।७२८।।

सबको छोड़ वहां सीधी मंजुला भवन में आई।
देखा इतनी विकल हो रही मधुर शब्द बतलायी जी ।।७२९।।

रोओ मत हे बेटी यहां तो हंसी-खुशी का काम।
रोना ही अब शेष रहा नहीं समझी तुम परिणाम जी ।।७३०।।

शांत चित्त से रहो अभी तुम यहां से हो अनजान।
कल ही होगी बातें अपनी, बहुत दिया सम्मान जी ।।७३१।।

कल की कह कर गई वेश्या पर कई दिन तक नहीं आय।
मंजुला भी दिल से यही चाहती वह मुख नहीं दिखलाय जी ।।७३२।।

सुख सुविधा की कमी नहीं वहां सब चीजें रखवायी।
तन रखने की सामग्री ली ममता भाव हटायी जी ।।७३३।।

अब तो मंजुला धर्म ध्यान में अपना समय बिताय।
नमस्कार का जाप करे, हर वक्त प्रभु गुण गाय जी ।।७३४।।

पति पुत्र को स्मरण करे, वह सोचे यों मन मांय।
धन्य नारी वह पति पुत्र संग अपना समय बिताय जी ।।७३५।।

पराधीन अबला के सन्मुख हर दिन संकट आय।
मनुज भेड़िये नारी शील को अपना लक्ष्य बनाय जी ।।७३६।।

शील रत्न की रक्षा हित ही पिता पुत्र पति चाय।
पग पग पर है खतरा स्त्री को नीतिकार दरसाय जी ।।७३७।।

अब तो है नवकार सहारा, और नहीं आधार।
शील सुरक्षा अति कठिन हो विषयों का संसार जी ।।७३८।।

अपने स्वार्थ हित वेश्या खर्चा करती रखती पहरा।
रूप लोलुपी भंवरों से मिल जायेगा धन गहरा जी ।।७३९।।

एक दिन मित्रों के कहने से युवक मण्डली आयी।
वेश्या को आते ही उनकी जेब भारी दिखलायी जी ।।७४०।।

भारी मन संकोच भाव से देख रहे चहुं ओर।
रूपराशि नहीं नजर आ रही बैठी है किस ठौर जी ।।७४१।।

वेश्यागृह में प्रथम वार ही किया आज प्रवेश।
स्वागत करके बोली आईए, फरमावें आदेश जी ।।७४२।।

चंचल मन और नेत्र देखकर बोली देते ताव।
जान गई मैं भाव आपके जो है मन में चाव जी ।।७४३।।

उसके दर्शन हो सकते, यदि रुपये मिले हजार।
नारी मत समझो उसको वह इंद्राणी अनुसार जी ।।७४४।।

चकित होकर कुंवर यों बोला ये दिखलाने के दाम।
याद रहे जीवन भर तुमको ऐसी सुन्दर वाम जी ।।७४५।।

वेश्या के उकसाने पर दीने दाम हजार।
खुश होकर ले आई वेश्या उसके कक्ष मझार जी ।।७४६।।

रूप देखकर रहा ठगा सा नयन नहीं हट पाय।
कभी न देखा ऐसा मैंने निज जीवन के मांय जी ।।७४७।।

एक बार मंजुला कंवर को देखे नयन पसार।
पति छवि सम लखकर उसको देखे बार-बार जी ।।७४८।।

मंजुला की इस नयन गति से वेश्या दिल हरसाय।
लगता है अब रूप सुन्दरी, सीधे रस्ते आय जी ।।७४९।।

कहा कंवर से जल्दी करिये, समय आ गया पास।
वह भी जाना नहीं चाहता अनुपम ही अहसास जी ।।७५०।।

मानो मेरा मन कहता है यही हो मेरा लाल।
पतिदेव से कितना मिलता रंग रूप और भाल जी ।।७५१।।

किन्तु दोनों वेश्या के भय नहीं कीनी कुछ बात।
भारी मन से उतर रहा समझी वेश्या अवदात जी ।।७५२।।

वेश्या बोली कहो कंवर तुम रात भी रहना चाहो।
बोला कंवर यदि आज्ञा दो तो वह बोली धन लाओ जी ।।७५३।।

कंवर कहे क्या फीस लगेगी, बोली दस हजार।
इतना धन तो अधिक होय यह रूप विशेष विचार जी ।।७५४।।

उलझाना कैसे मानव को थी इसमें प्रवीण।
तत्क्षण थैली खोली कर दी, वेश्या के अधीन जी ।।७५५।।

गिन लो इसमें मांगे उतने दस हजार हैं दाम।
चतुराई से बोली वह भी गिनने का क्या काम जी ।।७५६।।

मेरे यहां आने वाला कोई होता नहीं बेईमान।
गिने बिना ही रुपये आपके पूरे हैं यह ध्यान जी ।।७५७।।

अब ऊपर चलिए ले आई मंजुला भवन के मांय ।
बैठाकर बोली यों गणिका मिलन होय सुखदाय जी ।।७५८।।

यह कह करके वेश्या वहां से निज मंदिर में जाय ।
अपलक देख रहे हैं दोनों बात करें कुछ नाय जी ।।७५९।।

काम वासना लेकर आया अचरज होता मन में ।
भाव पलट गये शुद्ध प्रेम अब उमड़ रहा कण-कण में जी ।।७६०।।

पूज्य भाव से कंवर सोचता देखूं बारम्बार ।
मंजुला मन की यही दशा है लेलूं गोद मंझार जी ।।७६१।।

चन्द समय में उसके स्तन से निकली दूध की धार ।
विश्वास हुआ यह सुत है मेरा शंका दूर निवार जी ।।७६२।।

किन्तु परिचय ना जाने फिर कैसे हो विश्वास ।
युवक तुम्हारा क्या परिचय है, कहां तुम्हारा वास जी ।।७६३।।

युवक कहे यहां पर क्या परिचय यहां पैसे का राज ।
फिर भी तुम सुनना चाहो तो परिचय दे दूं आज जी ।।७६४।।

बणजारे का पुत्र कुसुम हूं रहूं उन्हीं के साथ ।
इतना सा क्या परिचय होता पूर्ण कहो अवदात जी ।।७६५।।

इसमें क्या शंका है तुमको दो मुझको समझाय ।
संदेह नहिं विश्वास है मुझको उनके सुत तुम नाय जी ।।७६६।।

विचित्र बात है मात पिता को, नहीं रही हो मान ।
अरे कुसुम मैं सच कहती हूं सुनो लगाकर कान जी ।।७६७।।

जन्म कोई माता दे उसको, पालन करे कोई मांय ।
करकण्डू प्रद्युम्न आदि के, दीने नाम गिनाय जी ।।७६८।।

अतः तुम्हारे पालक हैं वे मात-पिता हैं नांय ।
सुनते ही यह बात कुसुम को सद्य हंसी आ जाय जी ।।७६९।।

हंसते ही मुख लाल निकल गई मंजुला हुई अधीर ।
बेटा-बेटा कहते मां के बहा नयन से नीर जी ।।७७०।।

क्या आशा ले आया बेटा सोच दुःख बढ़ जाय ।
बोला माता जीवन की गाथा का ज्ञान कराय जी ।।७७१।।

बेटा सुन साधारण मानव तुझसा सुत नहीं पाय ।
जो हंसते ही लाल उगल दे, कारण देऊँ सुनाय जी ।।७७२।।

एक समय श्रीकांत पिता तुम, पाये सन्त वरदान ।
इसीलिए तुम मेरे जन्मे, उगलो लाल महान जी ।।७७३।।

वेश्यागृह में प्रथम बार ही किया ग्राज प्रवेश।
स्वागत करके बोली ग्राईए, फरमावें ग्रादेश जी ।।७४२।।

चंचल मन ग्रौर नेत्र देखकर बोली देते ताव।
जान गई मैं भाव ग्रापके जो है मन में चाव जी ।।७४३।।

उसके दर्शन हो सकते, यदि रुपये मिले हजार।
नारी मत समझो उसको वह इंद्राणी ग्रनुसार जी ।।७४४।।

चकित होकर कुंवर यों बोला ये दिखलाने के दाम।
याद रहे जीवन भर तुमको ऐसी सुन्दर वाम जी ।।७४५।।

वेश्या के उकसाने पर दीने दाम हजार।
खुश होकर ले ग्राई वेश्या उसके कक्ष मझार जी ।।७४६।।

रूप देखकर रहा ठगा सा नयन नहीं हट पाय।
कभी न देखा ऐसा मैंने निज जीवन के मांय जी ।।७४७।।

एक बार मंजुला कंवर को देखे नयन पसार।
पति छवि सम लखकर उसको देखे बार-बार जी ।।७४८।।

मंजुला की इस नयन गति से वेश्या दिल हरसाय।
लगता है ग्रब रूप सुन्दरी, सीधे रस्ते ग्राय जी ।।७४९।।

कहा कंवर से जल्दी करिये, समय ग्रा गया पास।
वह भी जाना नहीं चाहता ग्रनुपम ही ग्रहसास जी ।।७५०।।

मानो मेरा मन कहता है यही हो मेरा लाल।
पतिदेव से कितना मिलता रंग रूप ग्रौर भाल जी ।।७५१।।

किन्तु दोनों वेश्या के भय नहीं कीनी कुछ बात।
भारी मन से उतर रहा समझी वेश्या ग्रवदात जी ।।७५२।।

वेश्या बोली कहो कंवर तुम रात भी रहना चाहो।
बोला कंवर यदि ग्राज्ञा दो तो वह बोली धन लाग्रो जी ।।७५३।।

कंवर कहे क्या फीस लगेगी, बोली दस हजार।
इतना धन तो ग्रधिक होय यह रूप विशेष विचार जी ।।७५४।।

उलझाना कैसे मानव को थी इसमें प्रवीण।
तत्क्षण थैली खोली कर दी, वेश्या के ग्रधीन जी ।।७५५।।

गिन लो इसमें मांगे उतने दस हजार हैं दाम।
चतुराई से बोली वह भी गिनने का क्या काम जी ।।७५६।।

मेरे यहां ग्राने वाला कोई होता नहीं बेईमान।
गिने बिना ही रुपये ग्रापके पूरे हैं यह ध्यान जी ।।७५७।।

अब ऊपर चलिए ले आई मंजुला भवन के मांय ।
बैठाकर बोली यों गणिका मिलन होय सुखदाय जी ।।७५८।।

यह कह करके वेश्या वहां से निज मंदिर में जाय ।
अपलक देख रहे हैं दोनों बात करें कुछ नाय जी ।।७५९।।

काम वासना लेकर आया अचरज होता मन में ।
भाव पलट गये शुद्ध प्रेम अब उमड़ रहा कण-कण में जी ।।७६०।।

पूज्य भाव से कंवर सोचता देखूं बारम्बार ।
मंजुला मन की यही दशा है लेलूं गोद मंझार जी ।।७६१।।

चन्द समय में उसके स्तन से निकली दूध की धार ।
विश्वास हुआ यह सुत है मेरा शंका दूर निवार जी ।।७६२।।

किन्तु परिचय ना जाने फिर कैसे हो विश्वास ।
युवक तुम्हारा क्या परिचय है, कहां तुम्हारा वास जी ।।७६३।।

युवक कहे यहां पर क्या परिचय यहां पैसे का राज ।
फिर भी तुम सुनना चाहो तो परिचय दे दूं आज जी ।।७६४।।

बणजारे का पुत्र कुसुम हूं रहूं उन्हीं के साथ ।
इतना सा क्या परिचय होता पूर्ण कहो अवदात जी ।।७६५।।

इसमें क्या शंका है तुमको दो मुझको समझाय ।
संदेह नहिं विश्वास है मुझको उनके सुत तुम नाय जी ।।७६६।।

विचित्र बात है मात पिता को, नहीं रही हो मान ।
अरे कुसुम मैं सच कहती हूं सुनो लगाकर कान जी ।।७६७।।

जन्म कोई माता दे उसको, पालन करे कोई मांय ।
करकण्डू प्रद्युम्न आदि के, दीने नाम गिनाय जी ।।७६८।।

अतः तुम्हारे पालक हैं वे मात-पिता हैं नांय ।
सुनते ही यह बात कुसुम को सद्य हंसी आ जाय जी ।।७६९।।

हंसते ही मुख लाल निकल गई मंजुला हुई अधीर ।
बेटा-बेटा कहते मां के बहा नयन से नीर जी ।।७७०।।

क्या आशा ले आया बेटा सोच दुःख बढ़ जाय ।
बोला माता जीवन की गाथा का ज्ञान कराय जी ।।७७१।।

बेटा सुन साधारण मानव तुझसा सुत नहीं पाय ।
जो हंसते ही लाल उगल दे, कारण देऊँ सुनाय जी ।।७७२।।

एक समय श्रीकांत पिता तुम, पाये सन्त वरदान ।
इसीलिए तुम मेरे जन्मे, उगलो लाल महान जी ।।७७३।।

मंजुला बात पर कुसुम कंवर को हुआ पूर्ण विश्वास।
देख तुझे मां मेरे दिल की निकल गई सब फांस जी ॥७७४॥
क्या परिवर्तन आया दिल में बेटा दो बतलाय।
प्रथम समय मैं आया यहां पर वासना थी मन मांय जी ॥७७५॥
तुम दर्शन करते ही वह तो छूमन्तर हो जाय।
दिल की सारी गई बिमारी चित्त शांत हो जाय जी ॥७७६॥
इतना ही नहीं दिल में मेरे पूज्य भाव जग जाय।
सत्य बात है दुष्ट पुरुष भी मां आगे झुक जाय जी ॥७७७॥
पुत्र कहे मां कष्ट सहे अब सेवा करूँ हरसाय।
कैसे होगी सेवा तुझ से, हूं बंधन के मांय जी ॥७७८॥
बंधन मुक्त कराऊंगा, गणिका को तो धन चाय।
धन से घर भर दूंगा इसका, लूंगा तुझे छुड़ाय जी ॥७७९॥
इतना धन दे देंगे तुझको बनजारे मां-बाप।
इतने वर्षों तक लालें दीं कह दूंगा मैं साफ जी ॥७८०॥
यदि करे इन्कार मुझे तो, तुरंत लगा दूं ढेर।
पाप पंक से निकालने में नहीं करुंगा देर जी ॥७८१॥
सुत के इस आश्वासन से सन्तुष्ट हो गई मात।
अब तो एक सहारा तेरा, और नहीं कोई साथ जी ॥७८२॥
सुख दुख की बातों में, उनकी पूरी हो गई रात।
ध्यान रहा नहीं समय निकलते तुरन्त हुआ प्रभात जी ॥७८३॥
वेश्या आई जान कुसुम ने अपनी बात सुनाई।
मैं इनको ले जाऊ साथ में, दो आज्ञा फरमाई जी ॥७८४॥
वेश्या कहे क्या यह जाने को हो गई है तैयार।
कहे मंजुला इनके संग जाने से कब इन्कार जी ॥७८५॥
सुनकर के मंजुला भाव को वेश्या विस्मय पाय।
एक रात के परिचय से ही कितनी मुग्ध हो जाय जी ॥७८६॥
पूछ रही वेश्या यों उसमें क्या विशेषता पाई।
यहां आते कई रूपवान, धनवान कमी कुछ नाहीं जी ॥७८७॥
पुरुष नाम सुनते ही अब तक आता था आवेश।
जाने को तैयार हो गई नहीं क्रोध का लेश जी ॥७८८॥
दृढ़ स्वर में कहे मंजुला क्या रूप-अर्थ से अर्थ।
तुम्हें नहीं मुझको तो चावे इनके बिन सब व्यर्थ जी ॥७८९॥

कुसुम कहे कितना धन चाहे दो मुझको बतलाय।
ठहरो युवक अभी क्या देखा मुझे कितना जल्दी अहित कराय जी ॥७९०॥

जितना मैं मांगूगी उतना क्या धन है तुम पास।
कितना लोगी ! रुपये लक्ष दस देओगे गुणरास जी ॥७९१॥

इतना ही क्यों इसके बदले देऊँ इससे ज्यादा।
कुछ दिन तक तुम करो प्रतीक्षा नहीं होगी कोई बाधा जी ॥७९२॥

मुंह मांगी कीमत के बदले ले जाऊंगा साथ।
वेश्या विस्मय करती बोली है नारी की जात जी ॥७९३॥

कुसुम कहे तुमको धन चाहे, मुझको यह मिल जाय।
इतना कहकर हुआ रवाना आंखें खुली रह जांय जी ॥७९४॥

थोड़ी देर तक रही सोचती, आई मंजुला पास।
इतने दिन मैं नहीं जानती तेरा कला विलास जी ॥७९५॥

वर्षों में जो हो नहीं सकता किया एक ही रात।
देने को तैयार लाख दस वह लक्ष्मी का नाथ जी ॥७९६॥

सुन्दर रूपवान पुरुषों को भेजूंगी तुम पास।
गहरा धन आवेगा घर में मन पूरी हो आश जी ॥७९७॥

बोली जोश से नहीं आने दूं सुन लो ध्यान लगाय।
कैसे नहीं आने दोगी यहां मम आज्ञा चल पाय जी ॥७९८॥

नहीं चलेगी आज्ञा मुझ पर है मेरा संकल्प।
कुसुम साथ जाना मुझको और नहीं विकल्प जी ॥७९९॥

कैसे जाओ जाने दूं ना, है मेरा अधिकार।
धन देने के बाद तुम्हारा उतर जायेगा भार जी ॥८००॥

धन ले रक्खू घर के अन्दर फिर दूं उसे निकाल।
मेरे सामने नहीं चलेगी, फैला दूंगी जाल जी ॥८०१॥

सोने का अण्डा दे मुर्गी, उसको बेचा जाय।
ऐसा मूर्ख है कौन जगत में, सोच जरा दिल माय जी ॥८०२॥

पड़ी रहो तुम यहां मौन कर मेरी आज्ञा पाय।
वेश्या की यह बात श्रवण कर, रोष उसे आ जाय जी ॥८०३॥

अब मैं तेरे किसी हुक्म को कभी नहीं मानूंगी।
धोखा देकर ले आई पर मन चाहा कर लूंगी जी ॥८०४॥

वेश्या बोली कुछ भी कर तू रहना है घर मांय।
आज्ञा अगर नहीं मानी तो बुरा हाल हो जाय जी ॥८०५॥

बड़े जोर की देकर धमकी गणिका गई सिधाय।
एकाकी मंजुला भवन में चिंता मग्न हो जाय जी ॥८०६॥

चिंता की उत्ताल तरंगों ने आकर के घेरा।
ना जाने वह क्या कर बैठे यहाँ कौन है मेरा जी ॥८०७॥

कुलटा का विश्वास नहीं, यह कैसा जाल बिछाय।
शील रक्षा ही मुझको करना होगा आज उपाय जी ॥८०८॥

पुत्र गया धन लेने खातिर ना जाने कब आय।
तब तक तो मेरे जीवन का सब कुछ ही लुट जाय जी ॥८०९॥

अब तक मैंने धर्म बचाया अब भी करूं उपाय।
टहल रही छत पर चढ़कर वह सोच रही मन मांय जी ॥८१०॥

शील बचाना जीवन देकर जीने की नहीं चाह।
छत से नीचे कूद मरु नहीं सुन पायेगी आह जी ॥८११॥

भवन पास में बह रही सरिता, दोनों किनारे छोड़।
प्राण रक्षा हित कूदूं इसमें दूं जीवन को मोड़ जी ॥८१२॥

फिर विचार आया यों मन में आवे जावे लोग।
निकाल लेंगे गिरते हीं करना होगा शोक जी ॥८१३॥

अतः अभी नहीं कूदूं ऐसा सोच कक्ष में आय।
रात्रि मांहि कोई न देखे, लूंगी काम बनाय जी ॥८१४॥

तब से ही नवकार जाप में सारा वक्त बिताय।
निद्राधीन हो गये सभी तब उठकर छत पर जाय जी ॥८१५॥

मंत्र जाप कर छत से उसने लीनी छलांग लगाय।
गिरते ही आवाज हुई फिर स्वतः शान्त हो जाय जी ॥८१६॥

अब सरिता के तीव्र वेग में मंजुला बहती जाय।
यही नदी आगे जाकर गंगा मांहि मिल जाय जी ॥८१७॥

प्रातः काल तक काशी नगरी तट तक बहती आय।
पानी पिलाने पशुओं को गोपाल नदी तट लाय जी ॥८१८॥

बहते देखी अबला को तो लीनी त्वरित निकाल।
बेहोशी की हालत लखकर, घर लाये गोपाल जी ॥८१९॥

किया उचित उपचार मंजुला स्वस्थ हुई उस बार।
घेरा डाले खड़े हुए थे, अनजाने नर नार जी ॥८२०॥

महिलाएं थीं अधिक वहाँ पर किंतु पुरुष थे चंद।
इधर उधर दृष्टि दौड़ा निज कर ली आंखें बंद जी ॥८२१॥

डरी हुई लख उसको एक ने कहा आँखें दो खोल।
बहन हमें अपना ही समझो, बोलो मीठे बोल जी ॥८२२॥
कहे दूसरी घबराओ मत यहाँ खतरा कुछ नांय।
आँख खोलकर पूछा उसने परिचय दो बतलाय जी ॥८२३॥
यहां बस्ती गोपालों की है, दूध दही का काम।
दही छाछ गोरस को बेचें करते हैं आराम जी ॥८२४॥
काशी नगरी जाकर हर दिन करते हैं व्यापार।
यह सुन उसको शांति आई सोचे हृदय मंझार जी ॥८२५॥
नहीं मुफ्त में खाना मुझको, श्रम करके कुछ लाऊं।
नीति वाक्य है याद सदा, ऐसा कर शांति पाऊं जी ॥८२६॥
जहां जैसा ही काम सभ्यजन उसमें ही ढल जाय।
मंजुला भी ग्वालिनों संग में छाछ बेचने जाय जी ॥८२७॥
जीवन साधन मिला वहां पर पति पुत्र कब आय।
मंत्र जाप करती आशा रख मिलने की मन मांय जी ॥८२८॥
पालक मात-पिता पास आ कुसुम बात दरसाय।
विनय पूर्वक अर्ज करूं दस लाख रुपये चाय जी ॥८२९॥
चौंक गया है पिता बात सुन लीनी मौन अवधार।
कुसुम कहे जल्दी करिये, देरी से होय बिगार जी ॥८३०॥
जल्दी-जल्दी करने से पालक को आ गया कुछ आवेश।
नहीं दे सकता पैसा एक भी, नहीं चलेगी लेश जी ॥८३१॥
गृह पत्नी आवाज श्रवण कर पति पास आ जाय।
क्या कारण है इतने जोर से, बोलो ध्यान है नाय जी ॥८३२॥
अरे सुनो यह मांग रहा है अभी-अभी दस लक्ष।
कहां से लाकर देऊँ अभी मैं. मत लो इसका पक्ष जी ॥८३३॥
कुसुम कहे है इतनी दौलत फिर क्यों हो इन्कार।
कैसे पिता हो आप पुत्र से ज्यादा धन से प्यार जी ॥८३४॥
शब्द कठोर सुने सुत मुख से सह न सकी उस बार।
वणजारी कहे शर्म न आती बोले नहीं विचार जी ॥८३५॥
होता अंग जात अपना तो कहता नहीं ये बोल।
विनम्र होकर कुसुम कहे माँ किसका हूं दें खोल जी ॥८३६॥
आवेश में कह गई परन्तु बात बदलना चाय।
इधर-उधर की बातें बनाकर असली तथ्य छिपाय जी ॥८३७॥

किन्तु मानने वाला कब था माँ मुख से कहलाय।
अत्याग्रह से बणजारिन भी सुत आगे झुक जाय जी ।।८३८।।

सुनो, साल इक्कीस हुए, चन्द्रकांत वन मांय।
वट नीचे आकर के हमने डेरा दिया लगाय जी ।।८३९।।

वस्त्र पोटली बंधी डाल पर नजर हमारी आय।
उतार उसको देखा अन्दर शिशु खेलता पाय जी ।।८४०।।

हमने तुम्हारी माता की वहां, बहुत खोज करवाई।
किन्तु आकर वहां किसी ने कोई खबर दी नाही जी ।।८४१।।

कुसुम कहे वह माता मुझको सहज रूप मिल जाय।
उसकी बंधन मुक्ति हेतु दस लाख रुपये चाय जी ।।८४२।।

विस्मय से बणजारी पूछे, तुम्हें कहाँ मिल जाय।
पहचाना कैसे उसको—जीवन में देखी नांय जी ।।८४३।।

उसने तुझको कैसे जाना दो मुझको बतलाय।
लाल उगलते देख मुझे पहचाना—सुत सुखदाय जी ।।८४४।।

गई डाल पर बांध मुझे फिर, संकट में घिर जाय।
उसके बाद संकट ही संकट आये, उबर नहीं पाय जी ।।८४५।।

इस समय कहां पर है वह दुखिया कंचनपुर बतलाय।
मुझे दिला दो अभी रुपये, लाऊं शीघ्र ही जाय जी ।।८४६।।

मां बोली क्या इतने रुपये हां इतने ही चाय।
जिस बंधन में है वह उसकी इतनी मांग बताय जी ।।८४७।।

नारी दुःख को नारी समझे सहानुभूति दरसाय।
माँ-बेटे की बात श्रवणकर बणजारा मन लाय जी ।।८४८।।

बणजारा पूछे नारी से, क्या है तेरा बिचार।
हाँ इसको दस लाख रुपये देने हैं तत्काल जी ।।८४९।।

बणजारा कहे कैसे दे दूं, तू भी बात में आय।
नहीं बात में आई नाथ मैं सत्य ही बतलाय जी ।।८५०।।

माँ की कीमत तुम नहीं जानो मां ही उसको जाने।
उसके आगे जगति का धन सुपुत्र तुच्छ ही माने जी ।।८५१।।

इस कारण ही हम घर में हैं सारे सुख साज।
दस लाख रुपये दे दो जल्दी सुधर जाय सब काज जी ।।८५२।।

घर नारी के आगे, उसकी अधिक नहीं चल पाय।
अपने कोष से निकाल सत्वर, रुपये दीने लाय जी ।।८५३।।

लेकर अंक में बरणजारिन कहे नयन नीर टपकाय।
असली माँ को पाकर बेटा मुझे भूल मत जाय जी ।।८५४।।

बंधन मुक्त बना माता को धाय समझ घर आना।
सेवा का मौका देकर के मुझको धन्य बनाना जी ।।८५५।।

कुसुम कहे माँ कैसी बात कहो भूलू ना उपकार।
चरण स्पर्श कर खुशी खुशी चलने को किया विचार जी ।।८५६।।

पहुंचा वहाँ से कंचनपुर वेश्या के घर पर जाय।
थैली फैंककर के बोला उसको मेरे साथ भिजवाय जी ।।८५७।।

उदास मुख हो वेश्या बोली वह तो यहां पर नांय।
कहां गई तब बोली वो सरिता में गई समाय जी ।।८५८।।

झूंठी बात कह स्वजाति का परिचय रही बतलाय।
आखिर तो हो वेश्या ही तुम, कुसुम रहा दरसाय जी ।।७५९।।

मैं तेरे घर का हर कोना, देखूंगा इस बार।
कहीं छिपा रखी हो उसको नहीं तेरा एतवार जी ।।८६०।।

तुम चाहो तो देख आओ, सब खुले पड़े हैं द्वार।
चप्पा-चप्पा ढूंढ लिया पर नहीं निकला कुछ सार जी ।।८६१।।

एक-एक दासी से पूछा सभी यही बतलाय।
उसी रात में कूद गई वह, इस तटिनी के मांय जी ।।८६२।।

सबकी बात सुन कुसुम बिलखता करने लगा पुकार।
माता कहां मिलेगी तुम बिना सूना है संसार जी ।।८६३।।

थोड़ी देर में जाने लगा तब वेश्या यों दरसाय।
है अफसोस बचा नहीं पाई थैली साथ ले जाय जी ।।८६४।।

रुपये ले जाकर क्या करना क्या है इसमें सार।
वेश्या को इतना कहा सत्वर निकल गया है बहार जी ।।८६५।।

कुसुम कंवर का यही ध्यान है अब माँ कहाँ मिल पाय।
नदी किनारे हुआ रवाना वन पथ में बढ़ जाय जी ।।८६६।।

बेभान कुसुम का पाँव अचानक पड़ा नाग पे जाय।
डंक लगाकर सर्प उसी क्षण बांबी में छिप जाय जी ।।८६७।।

विष प्रभाव से सारे तन में नीलापन आ जाय।
चन्द समय में अचेत होकर भूमि पर गिर जाय जी ।।८६८।।

थोड़े समय में महायोगी इक विचरण करते आय।
विष से व्याप्त शरीर देखकर तुरन्त वहां रुक जाय जी ।।८६९।।

गारुडी मंत्र का जानकार वह करने लगा उपचार।
विद्याबल से चन्द समय में कुसुम हुआ तैयार जी ॥८७०॥

उठ बैठा अब योगीराज का मान रहा आभार।
कृतज्ञ भाव से कहे आपने किया महा उपकार जी ॥८७१॥

इतना कहकर चलने लगा तब, योगी पास बुलाय।
आत्मीय भाव से पूछ रहा है जाना कहां बतलाय जी ॥८७२॥

कुसुम कहे नहीं पता है मुझको विधि जहां ले जाय।
तब तो तुमको ना जाने यह कहां पहुंचाय जी ॥८७३॥

किसको ढूंढ रहे हो फिर कर बाबा क्या बतलाऊं।
तुम्हीं बताओ जिसको ढूंढू उसको कहां पर पाऊं जी ॥८७४॥

बाबा को ऐसा लगता है मानो अपना होय।
तुम एकाकी मुझे साथ लो भले एक से दोय जी ॥८७५॥

बाबा की यह बात कुसुम ने कर लीनी स्वीकार।
अब दोनों ही हुए रवाना करते हुए विचार जी ॥८७६॥

अवसर देखकर बाबा जी ने पूछा इस प्रकार।
किसकी तलाश में घूम रहे हो दो मुख से उच्चार जी ॥८७७॥

योगी पर विश्वास हुआ कहने में नहीं विचार।
माँ ने जैसा बतलाया कह दीना उसका सार जी ॥८७८॥

उसके बाद कंवर यों बोला माता सरिता मांय।
कूद पड़ी अब तलाश करता घूमू वन-वन जाय जी ॥८७९॥

उसकी बीतक घटना सुनकर बाबा अश्रु बहाय।
रोता देखकर बाबा को, विस्मय का पार न पाय जी ॥८८०॥

कुसुम पूछ रहा बाबा जी, क्यों नीर नयन में आय ?
कुसुम कंवर को उस ही क्षण लिया गोदी में बिठलाय जी। ८८१॥

बाबा बोला तुम तात बात को आगे सुनना चाय।
चन्द्रकान्तपुर सर्प दंश से श्रीकांत होश खो जाय जी ॥८८२॥

पिताश्री पर क्या बीती यह मुझको दें बतलाय।
निश्चेष्ट पड़ा श्रीकांत वहां तब योगी दल आ जाय जी ॥८८३॥

देख उसे सब वहीं रुके अरु कीना है उपचार।
मंत्र योग से श्रीकांत को, कर दीना तैयार जी ॥८८४॥

उस वक्त वहां पर अश्वारोही मंजुला ढूंढने आय।
उनसे ज्ञात हुआ तुम जननी सुरक्षित बच जाय जी ॥८८५॥

किये अनेक प्रयास परन्तु उनको नहीं मिल पाय।
श्रीकान्त विश्वास करे नारी यहां से चली जाय जी ।।८८६।।

सोच समझकर योगी दल के साथ हुआ श्रीकान्त।
मौन धार ली योगी जी ने छोड़ अर्ध वृतांत जी ।।८८७।।

किन्तु कुसुम की जिज्ञासा तो आगे बढ़ती जाय।
इसके बाद क्या हुआ पिता का दीजे हाल बताय जी ।।८८८।।

योगी साथ वर्षों तक घूमें देश विदेश में जाय।
यही भावना रहती हरदम कहीं मंजुला पाय जी ।।८८९।।

योगी गुरु का योग्य शिष्य श्रीकांत सदा मन भाय।
अतः गारुड़ी विद्या मंत्र अरु तंत्र दिये बतलाय जी ।।८९०।।

विद्या देकर वृद्ध गुरु का देहावसान हो जाय।
उसके बाद में शिष्य समूह भी अलग-२ पंथ अपनाय जी ।।८९१।।

श्रीकान्त भी संघ छोड़कर कंचनपुर में आय।
इतना कहकर मौन हुआ तब कुसुम कहे तब बतलाय जी ।।८९२।।

श्रीकान्त की सारी बातें आप किस तरह जानें।
योगी बोला अभी तलक भी नहीं मुझे पहचाने जी ।।८९३।।

यह सुनते ही पिता-पिता कह चरणों में गिर जाय।
योगी उठाकर कंठ लगाया दोनों अश्रू बहाय जी ।।८९४।।

हर्ष विषाद का पानी बन करके बहुत देर तक बरसा।
थोड़ी देर में शांत हुए अब पिता पुत्र मन सरसा जी ।।८९५।।

कहां हमारा जन्म स्थान है, कौन-२ परिवार।
श्रीकान्त कहे मां अरु पद्मा बहन लघु संसार जी ।।८९६।।

श्रीपुर में है वास हमारा अति दूर है स्थान।
हृदय कुसुम का भर आया है इतनी बातें जान जी ।।८९७।।

दादी भुआ के दर्शन करुंगा कुसुम भाव दरसाय।
कहे पिता से यह इच्छा मुझ, जल्दी सफल कराय जी ।।८९८।।

घर से निकले कई वर्ष हुए दादी भुवा का हाल।
क्या दशा हुई होगी, उनकी करें सार संभाल जी ।।८९९।।

हां बेटा है चिन्ता मुझ दिल उधर रहा मैं जाय।
जाते मार्ग में मिले आज तुम इससे देर हो जाय जी ।।९००।।

जल्दी चलिये दादी भुवा की कुछ सेवा हो जाय।
दर्शन अरु सेवा कर अपना जीवन सफल बनाय जी ।।९०१।।

बड़े चाव से चल रहे दोनों आतुरता मन मांय।
वर्षों बाद में दर्शन होंगे, कब अपना घर आय जी ॥१०२॥
श्रीकान्त गया तब से ही मां बेटी दोनों साथ।
श्रावक के व्रत पालन करतीं, ध्यान यही दिन रात जी ॥१०३॥
विवाह करन की माता हरदम, पद्मा को समझाय।
सगे संबंधी पाड़ौसी भी आकर यही दरसाय जी ॥१०४॥
किन्तु उसका एक ध्यान रहे संवर सामायिक मांय।
विवाह संबंधी बातें सुनकर असहमत हो जाय जी ॥१०५॥
एक दिन पद्मा मां से बोली, कब तक हो इन्तजार।
भैया को गये युग बीते नहीं कोई है समाचार जी ॥१०६॥
निस्वासें ले माता बोली सांस जहां तक आश।
आशा के संबल हो बीते वर्ष दिवस और मास जी ॥१०७॥
पद्मा बोली बात सही, अब क्या आशा में सार।
तेरे कहने का क्या आशय बात कहो विस्तार जी ॥१०८॥
अब मां इस आशा बंधन को, देवो दिल से तोड़।
भाभी भैय्या ने तो घर को पहले ही दिया छोड़ जी ॥१०९॥
मेरी इच्छा है सुन माता अपना जीवन मोड़ें।
यह संसार असार जान संयम से नाता जोड़ें जी ॥११०॥
बात श्रवण कर माता बोली संयम क्यों मन भाय।
हां मां मानव जीवन पाकर लेवें सफल बनाय जी ॥१११॥
आने दे अवसर दोनों ही दीक्षा लें श्रेयकार।
मां की बात श्रवण कर पद्मा हर्षित हृदय अपार जी ॥११२॥
अब पद्मा का चित्त धर्म में अच्छी तरह लग जाय।
माताजी के मन में भी अब धर्म रुचि बढ़ जाय जी ॥११३॥
धर्म ध्यान करते पद्मा को याद पुरानी आय।
सन्नारी भाभी को मैंने घर से दी निकलाय जी ॥११४॥
वह भी दोषारोपण करके, झूठा कलंक लगाय।
यदि मुद्रिका नहीं चुराती कभी न घर से जाय जी ॥११५॥
भाभी जी नहीं जाती घर से भैया भी क्यों जाय।
जन्म बालक का यहीं पर होता, घर में आनन्द छाय जी ॥११६॥
मां की इच्छा पूरी होती रहती मोद के मांय।
मेरा प्यारा लाल भतीजा विवाह योग्य हो जाय जी ॥११७॥

झूठ बोल कर ही इस घर में दीनी आग लगाय।
यही बात सालती मन में पर अब क्या हो पाय जी ।।९१८।।

सारा दोष समझती अपना, पछा दिल के मांय।
फिर भी आतम चिंतन के मांहि, अपना समय लगाय जी ।।९१९।।

एक समय श्रीपुर के मांहि, श्रमणी संघ आ जाय।
नगर निवासी दर्शन वंदन करने को वहां आय जी ।।९२०।।

नर नारी परिषद में आर्या दे हितकर उपदेश।
नर भव पाकर समझो भव्यों जीवन का उद्देश्य जी ।।९२१।।

जग में तेरा क्या है अपना धन कंचन भंडार।
एक दिन सब को तजकर जाना, नहीं जावे कुछ लार जी ।।९२२।।

बहुत पुण्य से मिला आपको, मानव तन अवतार।
धर्म ध्यान कर लाभ कमालो यह जीवन का सार जी ।।९२३।।

बारह व्रत से आगे बढ़ कर महाव्रत जो अपनाय।
षटकाया का रक्षक बन वह अजर अमर बन जाय जी ।।९२४।।

उपदेश श्रवण कर मां बेटी को आतम बोध हो जाय।
स्वर्णिम अवसर मिला हमें यह व्यर्थ चला नहीं जाय जी ।।९२५।।

गुरुवर्या के पास पहुंचकर बोली आप महान।
हम दोनों तुम चरण शरण में पावें निज पहचान जी ।।९२६।।

यह संसार असार समझ हम लेवें संयम भार।
गुरुणी जीने देख जान लिया है उन्नति के आसार जी ।।९२७।।

साधु नियम अनुसार तुम्हें: अब आज्ञा लानी होय।
माता बोली आगे पीछे घर में हैं हम दोय जी ।।९२८।।

विस्मित होकर कहे गुरुणी जी कैसी बात बताय।
सत्य-२ कह रही आपको नायक है कोई नाय ।।९२९।।

एक पुत्र था पहले मेरे श्रीकान्त गुणवान।
बीस वर्ष से पता नहीं तज बहू भी गई नादान जी ।।९३०।।

पूछ ताछ कर गुरुणी ने सत्य बात ली जान।
मां बेटी के लिए संघ की आज्ञा को ली मान ।।९३१।।

घर सामग्री हाथों से दीनी पुण्य के मांय।
दीन अनाथ स्वधर्मी जन को दीनी खूब सहाय जी ।।९३२।।

सभी काम से निवृत होकर लीना संयम भार।
मां बेटी साध्वी बन करके पावे आगम सार जी ।।९३३।।

विनय पूर्वक धर्म रुचि से करती ज्ञानाभ्यास।
तप जप धर्म साधना करती रहती गुरुणी पास जी ॥९३४॥

श्रीकान्त अरु पुत्र कुसुम दोनों ही श्रीपुर जाय।
किन्तु मार्ग में आ गई काशी, दोनों वहां रुक जाय जी ॥९३५॥

काशी नरेश की पुत्री को एक, काला नाग डस जाय।
उससे वह निश्चेष्ट हो गई तन में विष छा जाय जी ॥९३६॥

मंत्र वादी अरु तंत्र वादी केई वैद्य वहाँ पर आय।
किंतु किसी की दवा स्वास्थ्य में लाभ नहीं कर पाय जी ॥९३७॥

मंत्र वादी अरु तंत्र वादी भी हताश होकर जाय।
किंतु भूप के दिल में आशा कोई स्वस्थ बनाय जी ॥९३८॥

काशी के हर राज मार्ग में यों आवाज लगाई।
राजकुमारी स्वस्थ बनादे, विष को दूर हटाई जी ॥९३९॥

उसको आधा राज और कंवरी को दें परणाय।
सुनी घोषणा श्रीकान्त के पैर वहीं रुक जाय जी ॥९४०॥

मरने की चौखट पर पहुंचा यदि कोई बचा जाय।
गुरुवर की अंतिम शिक्षा को देऊँ सफल बनाय जी ॥९४१॥

कभी तुम्हारे कानों में कोई ऐसी सूचना आय।
सर्प डस गया यह सुनते ही, पहले वहां पर जाय जी ॥९४२॥

करना वहां उपचार वचन यह कीना मैं स्वीकार।
वचन मम करना कुलीन को मारने से बदकार जी ॥९४३॥

उस ही क्षण श्रीकान्त वहां से राजमहल में जाय।
कुसुम कहे हम किधर जा रहे मार्ग दूसरा आय जी ॥९४४॥

श्रीकान्त कहे कर्तव्य पालन करने के हैं भाव।
निर्विष करने राजकुमारी बढ़ा रहा हूं पांव जी ॥९४५॥

चन्द समय में पिता पुत्र चल राज सभा में आय।
सिंहासन पर बैठे हैं पर चिंता मुख पर छाय जी ॥९४६॥

उन्हें देखते ही नृप समझा मंत्रवादी हैं लोग।
राजकुमारी शयन कक्ष में लाय मिटाने रोग जी ॥९४७॥

श्रीकान्त कहे मन कहता है सद्य स्वस्थ हो जाय।
हुई घोषणा नगरी में कुछ परिवर्तन करवाय जी ॥९४८॥

स्वस्थ होने की बात श्रवण कर नृप का दिल हरसाय।
परिवर्तन की चर्चा से आश्चर्य चकित हो जाय जी ॥९४९॥

क्या परिवर्तन चाहो आप ! तब योगी यों दरसाय।
करी घोषणा उसमें से परिणय की शर्त हटाय जी ॥९५०॥

क्योंकि प्रौढ़ शर्त विवाह की उचित नहीं ठहराय।
अतः समझलो किसी दशा में विवाह मुझे नहीं भाय जी ॥९५१॥

मेरे पुत्र को पति रूप में चाहे राजकुमारी।
आप खुशी से विवाह करें तो नहीं मेरी इनकारी जी ॥९५२॥

सुनकर सारी बात योगी की नरपति यों फरमाय।
मान्य आपकी शर्त यदि कंवरी निर्विष हो जाय जी ॥९५३॥

अनुमति पाकर श्रीकान्त ने किया गुरु को याद।
एकाग्रचित्त हो मंत्र जाप करता है उसके बाद जी ॥९५४॥

मंत्र प्रभाव से जहर हटा लालीमा हो रही व्याप्त।
कुछ स्पंदन को देख भूप भय होने लगा समाप्त जी ॥९५५॥

एक प्रहर के श्रम से उसने आंखें दीनी खोल।
हर्ष छा गया परिजन में सब धन्य-धन्य रहे बोल जी ॥९५६॥

अधिक समय तक श्रम करने से श्रीकान्त थक जाय।
शक्तिहीन लखकर अपने को बैठा शांति पाय जी ॥९५७॥

पिता श्री की देख अवस्था कुसुम रहा घबराय।
क्या कारण है पूछा तब वह श्रान्त हुआ बतलाय जी ॥९५८॥

थोड़ी देर विश्राम करूं मैं, अभी ठीक हो जाय।
कही भूप से बात व्यवस्था अनुकूल करवाय जी ॥९५९॥

हाथ पकड़ कर दिया सहारा भवन मांहि ले जाय।
समुचित सेवा करी पुत्र ने श्रीकान्त सो जाय जी ॥९६०॥

हाव-भाव और बोल चाल का अधिक हुआ प्रभाव।
पूछ रही कंवरी ये दोनों कौन महानुभाव जी ॥९६१॥

भूप कहे ये दोनों ही हैं तुझ जीवन दातार।
इनकी कृपा किरण ने सारा संकट दीना टार जी ॥९६२॥

राजकुमारी चुप हो गई पर प्रेम नयन में छाय।
इन भावों को देख भूप अब निज आसन पर आय जी ॥९६३॥

एक प्रहर विश्राम बाद श्रीकांत स्वस्थ हो जाय।
नरेश पास आते ही पूछा थक गये योगीराज जी ॥९६४॥

बहुत दिनों का जहर कुमारी तन में घुल-मिल जाय।
श्रम से मुझे सन्तोष हुआ अब स्वास्थ्य लाभ को पाय जी ॥९६५॥

योगीराज मैं कृतज्ञ हूं यह एक ही है संतान।
जीवन दाता आप बने हम कितना करें बखान जी ।।९६६।।

काशी में एक महा महोत्सव करवाने महाराज।
करी घोषणा श्रीकांत को देऊं आधा राज जी ।।९६७।।

उस ही क्षण श्रीकांत कहे नृप मुझे राज नहीं चावे।
कुसुम कंवर को अर्ध राज दें यदि आप मनभावे जी ।।९६८।।

श्रीकांत की इच्छा का सम्मान भूप करवाय।
राजकुमारी साथ कुसुम को आधा राज्य दिलाय जी ।।९६९।।

राज जंवाई कुसुम वहीं रहता आनन्द मांय।
दाम्पत्य जीवन राज सुखों में अपने दिवस बिताय जी ।।९७०।।

समय निकलते कुसुम कंवर ने पुत्र रत्न लिया पाय।
श्रीकांत भी नृप आग्रह से वहीं पर रुक जाय जी ।।९७१।।

पिता पुत्र के राज काज में आनन्द में दिन जाय।
निश दिन यादें आती मंजुला, पिता पुत्र दिल मांय जी ।।९७२।।

उधर मंजुला सदा छाछ ला बेचे काशी मांय।
महिलाओं के साथ शहर में निशदिन आवे जाय जी ।।९७३।।

हर दिन मंजुला छाछ बेचकर अपना गुजर चलाय।
रहन-सहन और बोल-चाल में परिवर्तन हो जाय जी ।।९७४।।

राजमार्ग गलियों में आकर देती है आवाज।
ले लो दूध दही और मट्ठा आनन्द का है राज जी ।।९७५।।

घट लेकर के प्रतिदिन, जैसे आई नगरी मांय।
शिर पर रखकर सभी साथ में बातें करती जाय जी ।।९७६।।

मंजुला सिर पर रखे घड़े पर लगा अचानक तीर।
घट फूटा और द्रव्य निकल कर भीगा पूर्ण शरीर ।।९७७।।

तीर जिस दिशा से आया था देखे ध्यान लगाय।
राज झरोखे बैठ कंवर मस्ती से तीर चलाय जी ।।९७८।।

तत्क्षण देखा राजकंवर ने जानी ग्वालिन पीर।
महलों से नीचे आया है पाने क्षमा का नीर जी ।।९७९।।

गलती हो गई माफ करें मुझ गया निशाना चूक।
हो रहा है इस अभद्रता से मेरा दिल दो टूक जी ।।७८०।।

जितना भी नुकसान हुआ दूं राजकोष से लाय।
उसकी बात सुन ग्वालिन को तब जरा हंसी आ जाय जी ।।९८१।।

देख हंसी को कुसुम कहे क्यों हानि में मुस्काय।
वह नहीं बोली उसके पहले एक सखी दरसाय जी ।।९८२।।

हम दुखियों का दु:ख आप धनवान नहीं जानेंगे।
सुबह खालें या शाम वक्त चिंता है क्या खावें जी ।।९८३।।

जाके पैर नहीं फटे हैं क्या जाने पर पीर।
गरीब का दु:ख गरीब जाने समझे नहीं अमीर जी ।।९८४।।

तुम ऐसा मत सोचो दिल में मुझे दु:ख है भारी।
राजकोष से द्रव्य मंगा कर कीमत दूंगा सारी जी ।।९८५।।

अतः क्षति का दु:ख भुला दो कहूं मैं बारम्बार।
कहे मंजुला सोच करूँ क्यों सुनलो राजकुमार जी ।।९८६।।

जिसके जीवन में संकट दु:ख और विपत्ति आई।
उसके लिए छाछ का क्या दु:ख ऐसी बात सुनाई जी ।।९८७।।

तीखी शूलों पर चलने का है जिसको है अभ्यास।
भय क्यों हो उसको कंकर पत्थर से है दु:खों की राश जी ।।९८८।।

जीवन तो सागर दु:खों का तैर किनारे आयी।
अब लहरों से क्या डरना है मंजुला सत्य दरसाई जी ।।९८९।।
हे ग्वालिन जीवन तो मेरा भरा दु:खों से पूर।
जैसा दु:ख मुझे है वैसा रहे सभी से दूर जी ।।९९०।।

सबको अपना-अपना ही दु:ख ज्यादा अनुभव होय।
जीवन कथा जब सुन लोगे दुखिया जानेंगे मोय जी ।।९९१।।
राजकंवर कहे ग्वालिन अपनी दु:ख गाथा दरसाय।
ग्वालिन बोली सुनने की इच्छा हो देऊं सुनाय जी ।।९९२।।
घर से बाहर सुत जन्मा हाथी ने फेंका सर में।
भूप जाल में फंसी पति को देख चली मैं वन में जी ।।९९३।।
वहां पति को नाग डस गया भागी विपिन मंझार।
सार्थ वाह घर लाया सेठाणी भेजी वेश्याद्वार जी ।।९९४।।
सुत वेश्या के घर आया मैं कूदी सरिता मांय।
ग्वालिन बनकर कष्ट सहे अब सोच छाछ का नांय जी ।।९९५।।

(सवैया) कवित्त

घर से निकली वन पुत्र जना, करि सूंड गह्यो जल में गिरना।
नृप जाल फंसी फिर भाग चली पति नाग डस्यो वन में भ्रमना ।।
बनजार लही गनिका जू दई सुत सेज चढ्यौ सरिता तरना।
महाराज कुमार ! भई गूजरी अब छाछ का सोच कहा करना ।।

सुना कुसुम ने अर्थ समझने मन को दिया लगाय।
सारी घटना वही सुनी जो मां जीवन में आय जी ॥९९६॥

अब ग्वालिन के मुख को देखा पूरा ध्यान लगाय।
माता माता कहता हुआ वह गिरा चरण में जाय जी ॥९९७॥

सभी गुजरियें चकित हो गई देख वहां का हाल।
कठिनाई से उसे संभाला हुआ बहुत बेहाल जी ॥९९८॥

मुझको तजकर कंचनपुर तू सरिता में गिर जाय।
समझ गई यह मेरा पुत्र है संशय दूर हटाय जी ॥९९९॥

महिलाएं यों मन में सोचें क्या इनमें संबंध।
राजपुत्र है, ग्वालिनी फिर कैसे अनुबंध जी ॥१०००॥

महिलाओं का झुण्ड देख श्रीकांत समझ नहीं पाय।
राजमहल से शीघ्र उतर वह भी वहां पर आ जाय जी ॥१००१॥

देखा उसने कुसुम ग्वालिन को मां मां रहा पुकार।
श्रीकांत ने विह्वल हो मंजुला दिया उच्चार जी ॥१००२॥

पति स्वर सुन करके मंजुला चरणों में गिर जाय।
हाथ बढ़े आगे मर्यादा तब बाधक बन जाय जी ॥१००३॥

उत्सुक होकर सखियां बोली क्या है इसमें राज।
श्रीकांत कहे क्यों नी समझी रही हमारी लाज जी ॥१००४॥

सपने में भी नहीं सोचा ये राजकंवर की मात।
किंतु आपके कहने से हम समझ गई सब बात जी ॥१००५॥

ग्वाल पत्नियां बोली बहन अब नहीं चलोगी साथ।
प्रेम पूर्वक रहे सभी हम साथ-साथ दिन रात जी ॥१००६॥

सब सखियों को मात मंजुला वहीं रोकना चाय।
पति पत्नि और पुत्र मिलन में बाधा नहीं पहुंचाय जी ॥१००७॥

श्रीकांत ले पत्नि पुत्र को राजमहल में आय।
सास आगमन सुन बहू चरणों में नम जाय जी ॥१००८॥

सिर पर हाथ रखा सासू ने आशीषें बरसाय।
पोते का मुख देख मंजुला कष्ट दिये बिसराय जी ॥१००९॥

आज यहां पर मिल प्रेम से सारा ही परिवार।
आपस में दुःख की बातें हो रही है उस वार जी ॥१०१०॥

जीवन भर संघर्ष बाद अब सब विध सुख आ जाय।
किन्तु इतने सुख में भी वह, धर्म भूलती नांय जी ॥१०११॥

सुख मिलने का कारण भी वह समझे धर्म प्रसाद ।
सब में धर्म चेतना आई मिटा सभी अवसाद जी ।।१०१२।।

फिर भी सबकी है इच्छा श्रीपुर जाना एक बार ।
मां, पद्मा को यहां लाना है संकट दूर निवार जी ।।१०१३।।

सुख शांति से हिल मिल करके, अपना समय बितावे ।
किन्तु काशी नरेश आग्रह से, नहीं निकलने पावे जी ।।१०१४।।

एक दिवस काशी नरेश को वन पालक दरसाय ।
राजोद्यान में साध्वी संघ का शुभागमन बतलाय जी ।।१०१५।।

पाकर सूचना वनपालक को दीना खूब इनाम ।
विद्युत सम यह बात फैल गई साध्वी संघ महान जी ।।१०१६।।

राजा प्रजा सब दर्शन वंदन को उत्साह से आय ।
श्रीकांत अरु सति मंजुला कुसुम साथ में जाय जी ।।१०१७।।

दर्शन वंदन करके हर्ष से बैठे परिषद मांय ।
भरी सभा में गुरुवर्या हितकर उपदेश सुनाय जी ।।१०१८।।

जिनवाणी सुन श्रोताओं के दिल में हर्ष भराय ।
यथाशक्ति कर त्याग ग्रहण सब अपने घर को जाय जी ।।१०१९।।

श्रीकांत मंजुला कुसुम दर्शन हित आगे जाय ।
साध्वी संघ के दर्शन करके मंजुला विस्मय लाय जी ।।१०२०।।

उनमें सास नणद पद्मा है गई उनको पहचान ।
देख मंजुला को दोनों को भी आया है ध्यान जी ।।१०२१।।

वन्दन करके सद्य मंजुला बैठी उनके पास ।
पश्चाताप करे पद्मा साध्वी गलती का अहसास जी ।।१०२२।।

सुनो श्राविके उस गलती का मुझको दुःख सताय ।
कांटा सा चुभता है दिल में क्षमा मुझे करवाय जी ।।१०२३।।

मंजुला बोली भूल जाईए, नहीं किसी पर रोष ।
करके पूर्व में लाई साथ वह है कर्मों का दोष जी ।।१०२४।।

ऐसा सुनकर पद्मा साध्वी शान्त चित्त हो जाय ।
पश्चाताप और प्रायश्चित से जीवन शुद्ध बनाय जी ।।१०२५।।

किस कारण आया वैराग्य पूछ रही वृतान्त ।
सास साध्वी कहे तुम्हारे बाद आया श्रीकान्त जी ।।१०२६।।

उसने अपनी बीतक घटना सारी दी बतलाय ।
कथन तुम्हारा सब था सच्चा पर फिर क्या हो पाय जी ।।१०२७।।

वह भी खोजने निकल गया हम दोनों रही दुःख पाय।
इक्कीस वर्ष तक राह देखी पर कोई लौट नहीं आय जी ।।१०२८।।

तुम बिन हम दोनों को खारा लगता था संसार।
इसीलिए सुयोग मिला तब लीना संयम भार जी ।।१०२९।।

सारी बात सुन सोचे मंजुला धन-धन बार हजार।
पद्माजी ने सर्प कन्चुक वत् छोड़े विषय विकार जी ।।१०३०।।

वर्षों तक दुःख सहन किया नहीं आया कभी विचार।
सुन्दर मिल गया योग मुझे अब लूंगी संयम भार जी ।।१०३१।।

वंदन करके हुई रवाना मन में धर विश्वास।
श्रीकांत और कुसुम पूर्व ही पहुंच गये आवास जी ।।१०३२।।

पति से आकर कहे मंजुला सुनिये मेरे भाव।
काम भोगों से ऊब गई, संयम लेने का चाव जी ।।१०३३।।

श्रीकांत कहे यह परिवर्तन तुम में कैसे आ जाय।
कैसे भावना बनी तुम्हारी, दो मुझको समझाय जी ।।१०३४।।

नाथ कहूं क्या सास ननंद ने की दीक्षा स्वीकार।
ब्रह्मचारिणी बहन आपकी तो मुझको क्या भार जी ।।१०३५।।

श्रीकांत कहां मां, पद्मा दे मुझको बतलाय।
दर्शन नहीं किए क्या उनके इसी संघ के मांय जी ।।१०३६।।

प्रसन्न होकर पिता पुत्र वहां दर्शन करने जाय।
दर्शन वंदन करके दोनों सुख साता पुछवाय जी ।।१०३७।।

कुसुम हृदय में दादी भुआ लख आनन्द का नहीं पार।
धन्य-धन्य है इन दोनों को छोड़ दिया संसार जी ।।१०३८।।

घर आते ही कहे मंजुला दो आज्ञा फरमाय।
मैं भी दीक्षा लूंगा ऐसा श्रीकांत दरसाय जी ।।१०३९।।

कुसुम कंवर से आज्ञा लेकर लेवें संयम धार।
सुनी बात और कहा पिता से मैं भी करूं अंगीकार जी ।।१०४०।।

मात-पिता अब पुत्र कुसुम को बात रहे समझाय।
अभी तुम्हारा समय नहीं है धर्म करो घर मांय जी ।।१०४१।।

कहे कुसुम यह काम भोग है जल में पंक समान।
कीचड़ में नहीं फंसना चाहता यह दुःखों की खान जी ।।१०४२।।

मात पिता सुन हुए प्रभावित सहमति व्यक्त कराय।
काशी नरेश अरु निज नारी से आज्ञा लेनी चाय जी ।।१०४३।।

उसकी दृढ़ता के आगे वे, दोनों ही झुक जाय।
आज्ञा मिल गई कुसुम कंवर को हर्ष मन के मांय जी ।।१०४४।।

कुसुम कंवर ने अपनो सुत नाना को दिया संभलाय।
योग्य बने तब सिंहान पर इसको दें बिठलाय जी ।।१०४५।।

बालक लघु होने से कुसुम वधु रही गृहस्थी मांय।
अस्वीकार किया राजा ने अवसर समुचित नांय जी ।।१०४६।।

धर्म घोष मुनि विचरण करते आये काशी शहर।
संयम लिया सभी ने मिलकर छायी लीला लहर जी ।।१०४७।।

सती मंजुला साध्वी संघ में शुद्ध संयम को पाले।
श्रीकांत अरु कुसुम मुनि भी गुरु आज्ञा में चाले जी ।।१०४८।।

जप तप उत्तम करे साधना जग से चित्त हटाय।
एक लक्ष्य है आत्म शुद्धि का और नहीं कुछ भाय जी ।।१०४९।।

अन्तिम कर संलेखन, आत्मशुद्धि कर लेवें।
मन वच काया बस में करके सुर गति में रहवे जी ।।१०५०।।

वहां से चवकर श्रावक घर में जन्म लिया सुख दाय।
आगार से अणगार बनकर, मुक्ति गढ़ को पाय जी ।।१०५१।।

कथानुसारे रचकर इसको खेल में दीनी बनाय।
कम ज्यादा मिथ्या दुष्कृत अरिहन्तादि साक्षी लाय जी ।।१०५२।।

खुले मुँह नहीं पढ़ें इसे यह सदा ध्यान रखाय।
पीसांगन पेंताली चोमासा हुं ठाणा सुख पाय जी ।।१०५३।।

'प्राज्ञ' प्रसादे सोहन मुनि यह जोड़ी चोमासा माय।
ज्ञानी जन पढ़कर कमी, हो देवें मुझे चेताय जी ।।१०५४।।